राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 की अपेक्षाओं के अनुरूप शिक्षक– शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक छात्राध्यापक को इस प्रकार समर्थ बनाना है कि वह–

- बच्चों का ख्याल रख सके और उनके साथ रहना पसंद करे।
- सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक संदर्भों में बच्चों को समझ सके।
- व्यक्तिगत अनुभवों से अर्थ निकालने को अधिगम अर्थात सीखना समझे।
- सीखने के तरीके समझे, सीखने की अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करने के संभावित तरीके जाने तथा सीखने के प्रकार, गति तथा तरीकों के आधार पर विद्यार्थियों की विभिन्नताओं को समझे।
- ज्ञान को, चिंतनशील सीखने की सतत् उभरती प्रक्रिया माने।
- ज्ञान को पाठ्यपुस्तकों के वाह्य ज्ञान के रूप में न देखकर साझा संदर्भों और व्यक्तिगत संदर्भों में उसके निर्माण को देखे।
- उन सामाजिक, पेशेवर और प्रशासनिक संदर्भों के प्रति संवेदनशील हो जिनमें उसे काम करना है।
- ग्रहणशील हो और लगातार सीखता रहे, समाज और विश्व को बेहतर बनाने की दिशा में अपनी जिम्मेदारियों को समझ सके।
- वास्तविक परिस्थितियों में न केवल समझदारी वाले रवैये को अपनाने की उपयुक्त योग्यता का विकास करे बल्कि इस तरह की परिस्थितियों का निर्माण करने के भी योग्य बने।
- उसके भाषायी ज्ञान और दक्षता का आधार ठोस हो।
- व्यक्तिगत अपेक्षाओं, आत्मबोध, क्षमताओं, अभिरूचियों आदि की पहचान कर सके।
- अपना पेशेवर उन्मुखीकरण करने के लिए सोच समझ कर प्रयास करता रहे। यह विशेष परिस्थितियाँ अध्यापक के रूप में उसकी भूमिका तय करने में मदद करेंगी।

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि (डी.एल.एड.)

Diploma in Elementary Education (D.El.Ed.)

कला शिक्षा व लोक संस्कृति भाग -1

प्रथम वर्ष

(प्रायोगिक संस्करण)

प्रकाशन वर्ष -2017

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
छत्तीसगढ़, रायपुर

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि (डी.एल.एड.)

Diploma in Elementary Education (D.El.Ed.)

कला शिक्षा एवं लोक संस्कृति (भाग-1)

प्रथम वर्ष

(प्रायोगिक संस्करण)

प्रकाशन वर्ष–2017

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,

छत्तीसगढ़, रायपुर

प्रकाशन वर्ष – 2017
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् रायपुर छत्तीसगढ़

संरक्षक एवं मार्गदर्शक
सुधीर कुमार अग्रवाल भा.व.से.
संचालक, राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

पाठ्य सामग्री समन्वयक
एन.के. प्रधान
हेमन्त साव
डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

विषय संयोजक
डॉ. नीलम अरोरा

पाठ्य सामग्री संकलन एवं लेखन
रीता श्रीवास्तव, मीना शुक्ला, सुभाष श्रीवास्तव

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद रायपुर उन सभी लेखकों/प्रकाशकों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता है जिनकी रचनाएँ/आलेख इस पुस्तक में समाहित है।

प्राक्कथन

विद्यालय में अध्ययनरत् बच्चे भविष्य में राष्ट्र का स्वरूप व दिशा निर्धारण करेंगे। शिक्षक बच्चों को कुम्हार की भाँति गढ़ता है और वांछित स्वरूप प्रदान करता है। इस गुरूतर दायित्व के निर्वहन के लिए शिक्षकों को बेहतर तरीके से तैयार करना होगा।

''शिक्षा बिना बोझ के'' यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) ने माना है कि शिक्षकों की तैयारी के अपर्याप्त अवसर से स्कूल में अध्ययन–अध्यापन की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इन कार्यक्रमों की विषयवस्तु इस प्रकार पुर्ननिर्धारित की जानी चाहिए कि स्कूली शिक्षा की बदलती आवश्यकताओं के संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता बनी रहे। इन कार्यक्रमों में प्रशिक्षुओं में स्व–शिक्षण और स्वतंत्र चिंतन की क्षमता के विकास पर जोर होना चाहिए।

कोठारी आयोग (64–66) से ही यह बात की जाने लगी थी कि शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत जरूरी है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा–2005 ने भी शिक्षकों की बदलती भूमिका को रेखांकित किया है। आज एक शिक्षक के लिए जरूरी है कि वह बच्चों को जाने, समझे, कक्षा में उनके व्यवहार को समझे, उनके सीखने के लिए उपयुक्त माहौल तैयार करे, उनके लिए उपयुक्त सामग्री व गतिविधियों का चुनाव करे, बच्चे की जिज्ञासा को बनाए रखे, उन्हें अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करे व उनके अनुभवों का सम्मान करे।

तात्पर्य यह कि आज की जटिल परिस्थितियों में शिक्षकों की भूमिका कहीं अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व महत्वपूर्ण हो गई है। इसी परिप्रेक्ष्य में शिक्षक–शिक्षा को और कारगर बनाने की आवश्यकता है। शिक्षक–शिक्षा में आमूल–चूल बदलाव की आवश्यकता बताते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा–2005 में शिक्षकों की भूमिका के संबंध में कहा गया है कि सीखने–सिखाने की परिस्थितियों में उत्साहवर्धक सहयोगी तथा सीखने को सहज बनाने वाले बनें जो अपने विद्यार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज में, उनकी शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को पूर्णता तक जानने में, उनमें अपेक्षित सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों व चरित्र के विकास में तथा जिम्मेदार नागरिकों की भूमिका निभाने में समर्थ बनाए।

प्रश्न यह है कि शिक्षक को तैयार कैसे किया जाए? बेहतर होगा कि विद्यालय में आने के पूर्व ही उसकी बेहतर तैयारी हो, उसे विद्यालय के अनुभव दिए जाएँ। इसके लिए शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम व विषयवस्तु को फिर से देखने की जरूरत है। इसी परिप्रेक्ष्य में डी.एल.एड. के पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है।

पाठ्यसामग्री का लक्ष्य शिक्षण विधि से हटकर शिक्षा की समझ, विषयों की समझ, बच्चों के सीखने के तरीके की समझ, समाज व शिक्षा का संबंध जैसे पहलुओं पर केन्द्रित है। पाठयक्रम में शिक्षण के तरीकों पर जोर देने के स्थान पर विषय की समझ को महत्व दिया गया है। साथ ही शिक्षा के दार्शनिक पहलू को समझने, पाठ्यचर्या के आधारों को पहचानने और बच्चों की पृष्ठभूमि में विविधता व उनके सीखने के तरीकों को समझने की शुरुआत की गई है।

चयनित पाठ्यसामग्री में कुछ लेखक/प्रकाशकों की पाठ्य सामग्री प्रशिक्षार्थियों के हित को ध्यान में रखकर ज्यों की त्यों ली गई है। कहीं–कहीं स्वरूप में परिवर्तन भी किया गया है, कुछ सामग्री अंग्रेजी की पुस्तकों से लेकर अनुदित की गई है। हमारा प्रयास यह है कि प्रबुद्ध लेखकों की लेखनी का लाभ हमारे भावी शिक्षकों को मिल सके। इग्नू और एन.सी.ई.आर.टी., एकलव्य भोपाल सहित जिन भी लेखकों/प्रकाशकों की पाठ्यसामग्री किसी भी रूप में उपयोग की गई है, हम उनके हृदय से आभारी हैं।

अंत में पाठ्यसामग्री तैयार करने में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सहयोगियों का हम पुनः आभार व्यक्त करते हैं। पाठ्यक्रम तैयार करने व पाठ्य सामग्री के संकलन व लेखन कार्य से जुड़े लेखन समूह सदस्यों को भी हम धन्यवाद देना चाहेंगे जिनके परिश्रम से पाठ्य सामग्री को यह स्वरूप दिया जा सका। पाठ्य–सामग्री के संबंध में शिक्षक –प्रशिक्षकों, प्रशिक्षार्थियों के साथ–साथ अन्य प्रबुद्धजनों, शिक्षाविदों के भी सुझावों व आलोचनाओं की हमें अधीरता से प्रतीक्षा रहेगी जिससे भविष्य में इसे और बेहतर स्वरूप दिया जा सके।

धन्यवाद।

संचालक
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण
परिषद्, छत्तीसगढ़,रायपुर

विषय–सूची

इकाई	पृष्ठ क्रमांक

इकाई –1 कला शिक्षा की अवधारणा और समझ 01–21

- कला एवं कला शिक्षा : अवधारणा एवं महत्व।
- क्षेत्रीय कलाएं तथा शिल्प परिचय : शैक्षिक उपयोगिता।
- 'कला' : शिक्षण विधि के रूप में।
- दृश्य एवं प्रदर्शन कला शिल्पकारी के संदर्भ में कला एवं शिल्प प्रदर्शनी का आयोजन।
- नियमित रुप से विविध प्रसंगों का बुलेटिन बोर्ड पर प्रदर्शन। प्रसंग इस प्रकार हो सकते हैं– फिल्म, पुस्तकें, त्यौहार, शिल्प, कलाकार, लेखक, स्थानीय कला व संस्कृति, कविता, कार्टून आदि।
- शाला अनुभव कार्यक्रम के अंतर्गत कला, शिल्प, संस्कृति संबंधी प्रोजेक्ट।
- कार्यस्थल सजावट व शाला सौन्दर्यीकरण।

इकाई –2 'कला समेकित शिक्षा : अवधारणा एवं महत्व 22–26

- कला समेकित शिक्षा की अवधारणात्मक समझ व शैक्षिक उपयोगिता।
- विद्यालय की दैनिक गतिविधियों के संदर्भ में कला शिक्षा को एकीकृत करना जैसे कला और भाषा, कला और गणित, कला और पर्यावरण।
- सीखने की संसाधन के रुप में हस्तशिल्प, संग्रहालय, ऐतिहासिक इमारतें, भवन, फिल्में, पुस्तकें, उत्सव, पर्यटन आदि। इन पर समीक्षा एवं रिपोर्ट लेखन।

इकाई –3 दृश्य कलाओं की समझ एवं शिक्षण में इसका सृजनात्मक उपयोग 27–37

- दृश्य कलाएं – अवधारणात्मक समझ और शैक्षिक उपयोगिता
- दृश्य कलाओं के विविध प्रकार एवं सामग्री निर्माण : पोस्टर कलर, पेस्टल कलर, रंगोली, मिट्टी से सामग्री निर्माण, कठपुतली निर्माण, कोलाज, मुखौटे बनाना, पेपर मेशी, चित्रकारी एवं अन्य स्थानीय शिल्प आदि से कला संबंधी कौशलों का विकास एवं शिक्षण में इनका उपयोग।

इकाई –4 प्रदर्शन कलाओं की समझ एवं शिक्षण में इसका सृजनात्मक उपयोग 38–52

- गायन, वादन, नृत्य, रंगमंच एवं समकालीन प्रदर्शन कलाओं के विविध स्वरूपों को विद्यालय में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया से जोड़ना।
- कला संबंधी विभिन्न स्थानों का भ्रमण एवं रिपोर्ट लेखन।

आंतरिक मूल्यांकन – कुल अंक 20

आंतरिक मूल्यांकन हेतु कुछ सुझावात्मक उदाहरण इस प्रकार हैं –

- स्थानीय सामग्री से खिलौने एवं कलाकृतियाँ बनाना (मिट्टी, बाँस, घास, कबाड़ से जुगाड़) ।
- पेपर क्राफ्ट संबंधी कार्य।
- स्थानीय कलाओं की जानकारी एकत्र करना तथा उनके ऐतिहासिक संदर्भों को लिपिबद्ध करना।
- स्थानीय समस्याओं एवं अन्य विषयों को कला के विविध रुपों में प्रस्तुत करना जैसे नाटक, प्रहसन, गायन नृत्य आदि।
- स्थानीय संदर्भ में विभिन्न कलाओं/शिल्पों एवं शिल्पकारों का मानचित्रीकरण।
- संस्थान में कला संसाधन केन्द्र का निर्माण।
- सीखने की संसाधन के रुप में हस्तशिल्प, संग्रहालय, ऐतिहासिक इमारतें, भवन, फिल्म, पुस्तकें, उत्सव, पर्यटन आदि। इन पर समीक्षा एवं रिपोर्ट लेखन।
- कला संबंधी विभिन्न स्थानों का भ्रमण एवं रिपोर्ट लेखन।

———000———

ईकाई –1

1. कला शिक्षा की अवधारणा

पठन सामग्री 1

कला क्या है ?

ज्यादातर कलाकार यह मानेंगे कि कला को परिभाषित करना उचित नहीं है। कला को परिभाषित करना उसे सीमित करना होगा जो किसी कलाकार को स्वीकार्य नहीं होगा। दूसरी बात यह है कि हर व्यक्ति कला की कुछ तो समझ रखता है और अपने जीवन में आजमाता है। इस कारण कला का तात्पर्य हर व्यक्ति के लिए अलग होगा, हर समाज व समय के लिए भी।

फिर भी कला किन बातों से संबंध रखती है, इसका हम कुछ खुलासा कर सकते हैं ताकि आपको इसके बारे में सोचने व अपनी समझ को विकसित करने में मदद मिलेगी।

1.1 सबसे पहले तो निस्संदेह हम कह सकते हैं कि कला मनुष्य व मानव समाज द्वारा निर्मित है और प्रकृति नहीं है। प्रकृति में हम सुन्दरता देख सकते हैं या प्रकृति से कलात्मक प्रेरणा ले सकते हैं। लेकिन कला का निर्माण मनुष्य अपने श्रम व कल्पना से करता है। कई लोग मानते हैं कि प्रकृति या सृष्टिकर्ता खुद एक महान कलाकार है, मगर ऐसा मानना उस पर मनुष्यतत्व आरोपित करना होगा।

1.2 कला का संबंध सृजनात्मकता व सृजनात्मक अभिव्यक्ति से है। मनुष्य की एक खास पहचान है कि उसे जिस प्रकार की दुनिया मिली है वह उसे रास नहीं आती है और वह एक बदली दुनिया की कल्पना करते रहता है और उसे साकार करने के लिए प्रयास करता रहता है। अगर आपको किसी चीज में कल्पना या सृजनशीलता की कमी लगती है तो आप उसे कम कलात्मक मानेंगे। यूं तो हमारी हर क्रिया या उत्पाद हमारी अभिव्यक्ति होती है, मगर कला के माध्यम से हम अपनी बात को दूसरो तक पहुंचाने का प्रयास करते हैं। यूं कह सकते हैं कि कला स्वांतः सुखाय नहीं होती है। लेकिन इस विचार को लेकर मतभेद हो सकता है क्योंकि कई परंपराओं में कला को व्यक्ति व परमतत्व को जोड़ने वाला माध्यम माना गया है जिसमें दूसरे मनुष्य के लिए कोई भूमिका नहीं है।

1.3 कला का संबंध कहीं न कहीं सुन्दरता व सौन्दर्यबोध से है। शायद हर मनुष्य किसी न किसी रूप में सौन्दर्य की खोज में रहता है और उसे अपने कृतियों में उतारना चाहता है। लेकिन यहां एक पेंच है। मानव समाज अक्सर सुन्दरता का मापदण्ड निर्मित कर देता है और उसकी मदद से सौन्दर्य को आंकने का प्रयास करता है। लेकिन मनुष्य इस माप या परिभाषा से बंधना पसंद नहीं करता है, और सतत सौन्दर्य के नए आयामों को खोजता रहता है।

इसका परिणाम यह होता है कि किसी बात को जिसे आज समाज कुरूप या भद्दा मानता है, वह एक नए सौन्दर्यशास्त्र का आधार बन जाता है।

1.4 कला ऐंद्रिक होती है यानी कलात्मक चीजों को हम अपने इन्द्रियों से निर्माण करते हैं और अपनी इन्द्रियों से देख, सुन, छू, सूंघ हाँ चख भी सकते हैं। यानी कला केवल कल्पना या सोचने की चीज नहीं है। वह ठोस निर्माण भी है। रंग, आकार, टेक्स्चर, आवाज, स्वाद, गंध कला के माध्यम से इनके नए–नए आयामों को हम खोलते रहते हैं। इससे हमारी इंद्रियां और परिष्कृत व बारीक बातों के प्रति संवेदनशील होती जाती हैं, हर पल नए रंग, नई आकृति आदि को देखने लगते हैं।

1.5 कला को मनुष्य जीवन के बाकी अंगों से अलग नहीं किया जा सकता है। उसके उत्पादन कार्य से, उसकी जीवन यापन क्रियाओं से, उसकी अपनी आत्म छवि से, सामाजिक संघर्षों व विडंबनाओं से– कला इन सब को प्रभावित करती है, प्रतिबिंबित करती है और उनसे प्रभावित होती है। लेकिन इन सबके बीच कोई यांत्रिक प्रभाव का रिश्ता नहीं है– यह रिश्ता बहुत जटिल व द्वंदात्मक है।

1.6 ''कलाकार कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं होता है मगर हर व्यक्ति एक विशिष्ट कलाकार होता है'' – यह महान कला चिंतक आनन्द कुमारस्वामी का कथन है, इस कथन पर गौर करें।

1.7 जीवनशैली में कलात्मकता – हम अपने दैनिक जीवन को किसी न किसी रूप में कलात्मक बनाने का प्रयास करते हैं। हमारे मन में व आचरण में एक खास सौन्दर्यबोध व कलाबोध निहित होता है। आमतौर पर यह परिष्कृत या सचेत नहीं होता। हम अपने घरों को कैसे सजाते हैं, लिपाई पुताई कैसे करते हैं, किस तरह के कपड़े पहनते हैं, बिस्तर पलंग कैसे रखते हैं, कैसे बर्तन इस्तेमाल करते हैं, उन्हें किस तरह से जमाते हैं, चूल्हा चौका कैसे रखते हैं, पूजा आराधना के जगह को कैसे रखते हैं, इन सब में गहरी कलादृष्टि समाई रहती है। लेकिन हम इनके बारे में सचेत नहीं होते हैं, हम उनके बारे में सोचते नहीं है और उनके नष्ट होने का अहसास भी नहीं करते हैं। आधुनिक जीवन में हमारे ऊपर लगातार नए कलात्मक प्रभाव पड़ते रहते हैं– अगर हम कलात्मकता के बारे में सचेत होकर चुनाव नहीं करते हैं तो हम बेतरतीब कला खिचड़ियों का शिकार हो सकते हैं। इसके लिए जरूरी है कि हम विभिन्न जीवनशैलियों, परंपराओं में कलाबोध के बारे में और खासकर हमारी अपनी सांस्कृतिक परंपरा के सौन्दर्यबोध के बारे में सचेत होकर समझें। जो भी चुनाव करें उसे सोच समझकर करें।

1.8 लोक कला व व्यावसायिक कला – लोक कला की खासियत यह है कि वह लोक जीवन का अभिन्न अंग होती है लेकिन काफी रूढ़ परंपराओं से बंधी होती है। उस संस्कृति का हर व्यक्ति उसका अनायास साधक होता है। लोक गीत हर कोई गाता है, रंगोली या मांडना हर कोई कर लेता है, लोक नृत्य हर कोई नाचता है। हां यह जरूर है कि अक्सर

कुछ विशिष्ट लोक कलाकार होते हैं, जो आम लोगों के कलात्मक जरूरतों को पूरा करते हैं, जैसे कोई पंडवानी गायक होगा या फिर कोई कुम्हार या सोनार या ठठेरा होता है। कई लोग मानते हैं कि लोक कला ही सभी व्यावसायिक व उच्च कला की अंतिम प्रेरणा का स्त्रोत हैं और इसके कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए प्रसिद्ध शास्त्रीय गायक पं. कुमार गंधर्व पर मालवी लोक गायन का गहरा प्रभाव था। या फिर उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ के शहनाई वादन में पूर्वी लोक धुनों की अमिट छाप थी। नन्दलाल बसु जैसे आधुनिक चित्रकार या मूर्तिकार लोक कला से बहुत प्रभावित हुए।

भारतीय कला परंपराओं में इस विभेद को देशी व मार्गी परंपरा के रूप में देखा गया देशी मतलब लोक कला व मार्गी मतलब शास्त्रीय व्यावसायिक कला।

मार्गी कला व देशी कला में शायद हम कई तरह के अंतर कर सकते हैं, (जैसे मार्गी कला का शास्त्र होता है, वह व्यावसायिक होती है, अधिक सृजनशील होती है, रूढ़िबद्ध नहीं होती है, उसका क्षेत्र विस्तार बड़ा होता है आदि। मगर उनमें से कई को तर्क के आधार पर सही ठहरा नहीं सकते हैं। हम शायद यही कह सकते हें कि समृद्ध व ताकतवर लोगों के लिए जो कला का निर्माण होता है उसे शास्त्रीय कला का दर्जा दिया जाता है ठीक उसी तरह जैसे बोली व भाषा के संदर्भ में होता है।

1.9 कला और शिल्प या कारीगरी : हर उत्पादक कार्य करने वाला कुछ कलाबोध रखता है और उसे अपने उत्पादन में अभिव्यक्त करता है। इस कारण बहुत सी परंपराओं में कला व शिल्प में विभेद नहीं किया जाता है। संस्कृत में मूर्तिकार या चित्रकार को शिल्पिन कहा जाता है। कुछ इस तरह की बात ग्रीक या लैटिन में भी हैं लेकिन आधुनिक पश्चिमी विचारधाराओं में सृजनात्मक ललित कला व शिल्प को अलग किया जाता है। कारीगर बार–बार एक ही तरह की चीज को बनाता है– जैसे कि एक कुम्हार या प्लास्टर आफ पैरिस से मूर्तियां बनाने वाले लोग। ऐसे में वह चीज तो कलात्मक होती है मगर वह कलाकार नहीं होता है। जैसे कि किसी महान चित्रकार के चित्रों का नकल बनाने वाले। यह माना गया है कि ऐसे कामों में सृजनात्मकता की कमी है। लेकिन इस बात को लेकर मतभेद जरूर है।

आधुनिक पाश्चात्य कला में सृजनशीलता व व्यक्तिवाद पर काफी जोर दिया गया है। जिस काम में किसी खास व्यक्ति की सोच या खास व्यक्तित्व नहीं झलकता है, वह जो सृजनशीलता व नयापन का प्रमाण नहीं देता है, भले ही वह सुन्दर व कलात्मक हो, उसे कलाकृति कहने से यह परंपरा कतराती है। इस विचार को किस हद तक आप स्वीकार करना चाहते हें यह आप पर है। लेकिन हमें यह याद रखना होगा कि 1500 ईस्वी. से पहले हम केवल इक्के–दुक्के कलाकारों के ही नाम जानते हैं। यानी कई कला परंपराएं हैं जो व्यक्तिवाद को कला का अभिन्न अंग नहीं मानती हैं।

शिक्षा में कला का स्थान

नन्दलाल बसु

पठन सामग्री 2

नन्दलाल बसु हमारे देश के महान कलाकारों में से थे जो रवीन्द्रनाथ टैगोर के शांतिनिकेतन में पढ़ाते थे। आज भी उनके चित्र शांतिनिकेतन और दिल्ली के राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय में देखे जा सकते हैं। इस लेख में वे कला शिक्षण की जरूरत पर जोर दे रहे हैं और कला विषय में रूचि जागृत करने में कुछ तरीके सुझाये हैं। उनके शिष्य देवी प्रसाद बाद में गांधी जी के सेवाग्राम में स्थापित बुनियादी शाला में कला पढ़ाते थे और उनकी पुस्तक शिक्षा का वाहन कला के कई अंश हमें पढ़ाने और पढ़ने चाहिए।

1.2 मनुष्य ने आनंद की प्राप्ति और ज्ञान के लिए जितने उपायों का विकास किया है, उनमें भाषा का विशेष स्थान है। साहित्य, दर्शन, विज्ञान और प्रकृति के नाना विषयों की चर्चा भाषा को माध्यम बनाकर ही की जाती है। साहित्य मनुष्य को आनन्द देता है, पर उसकी अभिव्यक्ति का क्षेत्र सीमित होता है। उसके उस अभाव की पूर्ति करती हैं ललित कलाएं– नृत्य, संगीत एवं दूसरी कलाएं। जैसे साहित्य की अभिव्यक्ति की अपनी विशिष्टता है, वैसे ही नृत्य, संगीत एवं ललित कलाओं की भी। मनुष्य अपने इन्द्रियों द्वारा, मन द्वारा बाह्यजगत की समस्त वस्तुओं का स्थूल ज्ञान एवं उनके प्रति रसानुभूति का अनुभव करता है और उसे ही कला के माध्यम से दूसरों के सामने परिवेशित करता है। शिक्षा के क्षेत्र में कला की चर्चा के कारण मनुष्य की अवधारणा एवं रसानुभूति दोनों उत्कर्ष को प्राप्त करती हैं और उसे कलात्मक अभिव्यक्ति पर अधिकार प्राप्त होता है। जिस प्रकार आंख का काम कान द्वारा नहीं हो सकता, उसी प्रकार चित्रकला, संगीत या नृत्य की शिक्षा केवल लिखने–पढ़ने से नहीं हो सकती।

यदि हमारी शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास हो तो हमारे पाठ्यक्रम में कला का स्थान अन्यान्य पढ़ाई–लिखाई के विषयों के समान होना चाहिए। हमारे देश में विश्वविद्यालयों की ओर से अब तक जो व्यवस्था की गई है, वह नितान्त अपर्याप्त है। इसका एक कारण सम्भवतः यह है कि हमारे यहाँ अनेक लोगों की मान्यता है कि कला–साधना मात्र पेशेवर कलाकारों का काम है, साधारण आदमी को उससे कुछ लेना–देना नहीं है। बहुत से पढ़े–लिखे लोग तक कला के संबंध में अपने अज्ञान के कारण संकोच का अनुभव नहीं करते, जन साधारण की तो बात ही छोड़िए। वे तो फोटो और चित्र का अंतर भी नहीं समझ पाते। वे बच्चों की जापानी गुड़िया को एक श्रेष्ठ कलाकृति मानकर उसे अवाक् देखते रहते हैं। महारद्दी लाल–नीले, बैंगनी रंगवाले रैपरों को देखकर उनके नेत्रों को किसी प्रकार की पीड़ा

नहीं होती। सच पूछिए तो उन्हें अच्छा ही लगता है। अधिक उपयोगिता की दुहाई देते हुए आसानी से उपलब्ध मिट्टी की कलसी के बदले टिन का कनस्तर इस्तेमाल करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए देश का शिक्षित समाज एवं विश्वविद्यालय उत्तरदायी है। ऊपर से देखने से विद्या के क्षेत्र में देशवासियों की जैसी सांस्कृतिक उन्नति परिलक्षित होती है, रसानुभूति के क्षेत्र में उनकी दीनता वैसी ही बढ़ती दिखलाई पड़ती है। वस्तुतः यह स्थिति कष्टदायक हो उठी है। इससे मुक्त होने का एक ही उपाय है– आज के शिक्षित समाज के बीच कला की शिक्षा का प्रचलन, क्योंकि यह शिक्षित समाज ही जन साधारण का आदर्श होता है।

सौन्दर्य बोध के अभाव में मनुष्य केवल रसानुभूति से वंचित रह जाता हो ऐसा नहीं, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उसकी क्षति होती है। सौन्दर्यबोध के अभाव में जो लोग घर के आंगन और कमरों में दुनिया भर का कूड़ा जमा करके रखते हैं, अपने शरीर एवं वस्त्रों की गंदगी साफ नहीं करते, घर की दीवाल पर, रास्ते में, रेल के डिब्बों में पान की पीक थूकते चलते हैं, वे केवल अपने स्वास्थ्य को ही नहीं वरन् पूरे राष्ट्र के स्वास्थ्य को क्षति पहुंचाते हैं। जिस प्रकार उनके द्वारा समाज के शरीर में नाना रोगों के कीटाणु संक्रमित होते हैं, उसी प्रकार उनके कुत्सित आचरण का कु–आदर्श भी जन साधारण में फैल जाता है।

हममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो कला–साधना पर विलासी एवं धनी लोगों का एकमात्र अधिकार मानते हैं और इस प्रकार उसे अपने दैनन्दिन जीवन से कोसों दूर रखना चाहते हैं। वे भूल जाते हैं कि सौन्दर्य ही कला का प्राण है, अर्थ की तुला पर कलाकृति को नहीं तोला जा सकता। गरीब संथाल अपनी छोटी–सी मिट्टी की झोपड़ी को लीप–पोतकर साफ करके रखता है, अपनी कथरी–गुदड़ी समेटकर रखता है और कॉलेज में पढ़ने वाला एक लड़का महल जैसे सुन्दर हॉस्टल या मेस के कमरे में महंगे कपड़े–लत्ते यों ही बिखेरकर मोड़–मुसड़कर रखता है। स्पष्ट है कि गरीब संथाल का सौन्दर्य–बोध उसके जीवन का अंग है, सजीव है, और धनी लड़के का सौन्दर्यबोध कपड़ों तक सीमित है, निर्जीव है। पढ़े–लिखे लोगों को कला–साधना के नाम पर कैलेण्डर में छपे मेमसाहब के चित्र को फ्रेम में मढ़वाकर एक सचमुच के अच्छे मित्र के बगल में टांगकर रखते हुए मैंने स्वयं देखा है। छात्रों में देखता हूं, चित्र के फ्रेम पर कपड़ा झूल रहा है, पढने के टेबल पर चाय का कप, शीशा, कंघी आदि पड़े हैं और कोको के टिन में कागज का फूल लगा है। साज–सज्जा में धोती पर खुले गले का कोट, साड़ी के साथ ऊंची एड़ीवाला मेमसाहबी जूता–हर कहीं संगति ओर सौंन्दर्य का अभाव दिखलाई पड़ता है। हमारे पास पैसे का अभाव हो या न हो, सौन्दर्यबोध का अभाव अवश्य है।

कुछ और लोग भी हैं जो कहते हैं – आर्ट करके पेट भरेगा क्या? यहाँ एक बात ध्यान में रखनी होगी। जिस प्रकार साहित्य के दो पक्ष हैं– एक जो आनन्द देता है और दूसरा जो

अर्थ देता हैं। इनको ललितकला और शिल्प कहा जाता हैं। ललितकला दैनन्दिन दुख–द्वन्द्व से संकुचित हमारे मन को मुक्ति प्रदान करती है। शिल्प हमारे दैनन्दिन उपयोग में आने वाली वस्तुओं को केवल अपने जादुई स्पर्श से सुन्दर बनाकर हमारी यात्रा को सुखमय ही नहीं बनाता वरन् अर्थोपार्जन का आधार बनाता है। शिल्प की अवनति के फलस्वरूप देश की आर्थिक अवनति भी हुई है। अतः आवश्यकतानुसार कला तथा शिल्प का उपयोग न करने से देश की बहुत आर्थिक क्षति भी होती है।

कला शिक्षण के अभाव में न केवल हमारी वर्तमान जीवन–यात्रा असुन्दर हो गई है वरन् हमारे अतीत के रस–सृष्टाओं द्वारा निर्मित रचनाओं की सौन्दर्य–निधि से भी हम वंचित हुए जा रहे हैं। हम लोगों की परखने की दृष्टि तैयार नहीं हो सकती फलस्वरूप देश में चारों ओर बिखरी चित्रकला, मूर्तिकला एवं स्थापना के सौन्दर्य को समझाने के लिए बाहर से विदेशियों के आने की आवश्यकता पड़ी। आधुनिक कलाकृतियों का भी जब तक विदेशी बाजारों में मूल्यांकन नहीं हो जाता तब तक हमारे यहां उनका आदर नहीं होता।

इनके निराकरण के लिए क्या किया जाए? इस पर विचार किया जाए। कला शिक्षा की पहली मांग है कि प्रकृति को एवं अच्छी कलात्मक वस्तुओं को श्रद्धा सहित देखा जाए, उनके निकट रहा जाए और जिन व्यक्तियों का सौन्दर्य बोध जाग्रत है उनसे उस संबंध में चर्चा करके कलाकृति के सौन्दर्य को समझा जाए। विश्वविद्यालयों का यह कर्तव्य है कि अन्यान्य विषयों के साथ–साथ वे कला विषय को भी पाठ्यक्रम में रखें, परीक्षा की दृष्टि से कला को अनिवार्य विषय मानें और विद्यार्थी प्रकृति के निकट सम्पर्क में आ सकें, इसकी व्यवस्था करें। अंकन–पद्धति की शिक्षा से विद्यार्थियों की पर्यवेक्षण शक्ति का विकास होगा और इससे साहित्य, दर्शन, विज्ञान प्रकृति विषयों के क्षेत्रों में भी उन्हें सत्य दृष्टि प्राप्त होगी। विश्वविद्यालयों की परीक्षा पास करने से ही कोई बड़ा कवि नहीं बन जाता। उसी तरह विश्वविद्यालय में कला की शिक्षा प्राप्त करके ही हर लड़का अच्छा कलाकर नहीं बन सकेगा। ऐसी आशा करना भूल होगी।

सबसे पहले विद्यालय में, लाइब्रेरी में, पढ़ने के कमरे तथा रहने के कमरे में, कुछ चित्र एवं मूर्तियां तथा अन्यान्य ललित कला एवं दस्तकारी वाली कृतियां सजाकर रखनी होंगी। उनके अभाव में इनके अच्छे फोटो या नकल रखी जा सकती है। दूसरी बात, उपयुक्त व्यक्तियों द्वारा ऐसी अनेक पुस्तकें लिखवानी होंगी जिनमें अच्छी कलाकृतियों के चित्र हों, उनका इतिहास हो और जो लड़कों को सहज ही समझ में आएं। तीसरी बात, बीच–बीच में फिल्मों के माध्यम से स्वदेश एवं विदेश की चुनी हुई अच्छी कलाकृतियों से विद्यार्थियों का साक्षात्कर कराना होगा।

चौथी बात, बीच–बीच में योग्य शिक्षकों के साथ पास के अजयाबघर या आर्ट गैलरी में विद्यार्थियों को भेजना होगा ताकि वे श्रेष्ठ कृतियां देख सकें। स्कूलों में यदि फुटबाल मैच देखने के लिए भेजने का इंतजाम किया जा सकता है तो आर्ट गैलरी देखने के लिए क्यों नहीं? एक बात ध्यान में रखिए कि एक अच्छी कलाकृति को अपनी आंखों से देखकर एवं समझकर जितनी कला की परख विकसित होती है उतनी एक सौ भाषण सुनकर भी नहीं होती। अच्छे चित्र या अच्छी मूर्तियां यदि बचपन से बच्चें देखते रहें तो कुछ समझ में आए या न आए, उनकी दृष्टि तैयार होगी। बाद में उनमें अपने आप अच्छी–बुरी कलाकृति का विवेचन करने की शक्ति पैदा होगी और उनका सौन्दर्यबोध विकसित होगा।

पांचवी बात, प्रकृति के निकट सम्पर्क में बच्चे आएं, इस उद्देश्य से हर ऋतु में विशेष उत्सवों का आयोजन करना होगा। इन आयोजनों में इस ऋतु–विशेष में पैदा होने वाले फल–फूलों का संग्रह करना और काव्य तथा कला के क्षेत्र में उस ऋतु से संबंधित जो भी श्रेष्ठ रचनाएं उपलब्ध हैं, उनसे जहां तक सम्भव हो, विद्यार्थियों को परिचित कराना उचित होगा।

छठी बात, प्रकृति में जो ऋतु उत्सव चल रहा है, उससे विद्यार्थियों को परिचित कराना। शरद् ऋतु में धान खेत और कमल से भरे तालाब (अर्थात् कमल–वन) तथा बसन्त–ऋतु में पलाश की बहार वे स्वयं अपनी आंखों से देख सकें, इसकी व्यवस्था करनी होगी। विशेषकर शहर में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए यह व्यवस्था करना बहुत जरूरी है। गांव के विद्यार्थियों की दृष्टि इस ओर आकर्षित करवाना पर्याप्त होगा। इन सब ऋतु उत्सवों के लिए विशेष रूप से छुट्टी देकर वनभोज की व्यवस्था करनी चाहिए और ऋतु के उपयुक्त वेशभूषा एवं खेलकूद आदि का आयोजन करना चाहिए। प्रकृति के साथ एक बार सम्पर्क स्थापित हो जाने पर, प्रकृति से वास्तव में प्रेम हो जाने पर, विद्यार्थी के मन में रस का स्त्रोत कभी सूखेगा नहीं, क्योंकि प्रकृति युग–युगान्तर से कलाकार के लिए कला का आधार उपस्थित करती रही है।

अन्तिम बात यह है कि साल में किसी एक समय विद्यालय में कला महोत्सव करना होगा। उसमें हर विद्यार्थी कोई न कोई चीज अपने हाथ से बनाकर श्रद्धा सहित लाकर रखेगा–भले ही वह कितनी भी सामान्य हो। विद्यार्थियों द्वारा बनाई गई वस्तुएं उत्सव के प्रति अर्ध्य स्वरूप होंगी, उन्हें उसी रूप में ग्रहण करना होगा। संगीत, नृत्य, जुलूस (शोभायात्रा) आदि के द्वारा उत्सव को सर्वांग सुन्दर बनाने की चेष्टा करनी होगी। उत्सव के लिए कोई निश्चित समय तय करना कठिन हैं, देश–भेद के अनुसार वह भिन्न–भिन्न होगा। बंगाल के लिए शरद् ऋतु ही सबसे उपयुक्त लगती है।

जहां तक हमें पता है, हमारे देश में रवीन्द्रनाथ ने शिक्षा के क्षेत्र में कला–साधना को उपयुक्त स्थान दिया था। विश्वविद्यालयों में प्रचलित वर्तमान शिक्षा पद्धति के फलस्वरूप उन्हें भी कदम–कदम पर बाधाओं का सामना करना पड़ा था। विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में कला का प्रशिक्षण सम्मिलित न होने के कारण अभिभावकगण इसे सर्वथा अप्रयोजनीय मानते हैं। फलस्वरूप जिन बच्चों में बचपन में नाना कलाओं के प्रति अनुराग दिखाई पड़ता है, वे भी प्रवेशिका परीक्षा के साल दो साल पहले से कला की अप्रयोजनीयता के प्रति सजग हो उठते हैं और उनका कला प्रेम इस समय से कम होते–होते अंत में एकदम समाप्त हो जाता है। समय आ गया है, इस ओर हमारे सर्वविद्या एवं ज्ञान–चर्चा के केन्द्र विश्वविद्यालय विशेष ध्यान दें।

इस प्रसंग में एक बात और कहना चाहता हूॅ। बहुत–सी सामयिक पत्रिकाओं के संपादक अनेक समय किसी विशेष शैली का नाम देकर अकुशल हाथों द्वारा बनाए गए चित्र छापते रहते हैं। उनकी इस रूचिहीनता की और कोई निन्दा न करके इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि यदि उन्हें अच्छे आधुनिक चित्र न मिलें तो वे अच्छे पुराने चित्र छापें, पर मित्रता या आत्मीयता की खातिर लोगों को गलत रास्ते पर ले जाने का अपराध न करें। जरूरत हो तो चित्र चुनने में सौन्दर्यबोध वाले समझदार व्यक्तियों से सहायता लें, क्योंकि आम शिक्षा की दृष्टि से सामयिक पत्र–पत्रिकाओं का महत्व कम नहीं है, अच्छा या बुरा दोनों ही तरह का वे प्रभाव डालती हैं।

सीधी सी बात है, कला के संबंध में शिक्षित समाज एवं विश्वविद्यालय की उदासीनता कम होने से ही कला चर्चा का प्रसार होगा और उसके फलस्वरूप देशवासियों का सौन्दर्यबोध तथा उनकी पर्यवेक्षण शक्ति बढ़ेगी, इसमें कोई संदेह नहीं।

''साभार'' :– पत्रिका अनौपचारिका के दिसम्बर 2008 अंक

1.3 बाल कला की समझ (बच्चों के चित्रों का विकासक्रम)

हम यह समझ गये है कि कला अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। कला के जरिए हम अपने अनुभव, विचार आदि प्रकट करते हैं, दूसरों से साझा करते हैं। बच्चों के संदर्भ में भी यह एक स्वाभाविक क्रिया है। वस्तुतः बच्चों की यह प्रवृत्ति होती है कि जो कुछ उन्हें अनुभव होता है उसे तुरंत साझा करना चाहते हैं। बच्चों द्वारा बनाए गए चित्र, अन्य कलात्मक कार्यो के माध्यम से उनके आंतरिक विकास का दर्शन होता है तथा उनके गुणों का प्रत्यक्षण होता है। बच्चों में कला के विकास में निरंतरता होती है। जिसकी अवस्थाएँ समय के साथ बदलती रहती हैं। सामान्यतः बच्चों में कला अनुभव के विकास की चार अवस्थाएँ होती हैं। यद्यपि इन

अवस्थाओं को विभाजित करने वाली कोई कठोर रेखा नहीं है। एक अवस्था से दूसरी अवस्था, दूसरी अवस्था से तीसरी, तीसरी से चौथी अवस्था में बच्चें कब प्रवेश करते हैं यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता । वास्तव में यह सब बच्चों के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। बच्चों के कला विकास क्रम की मुख्य्य अवस्थाएँ निम्नवत हैं –

1.3.1 कीरम–कांटे अवस्था : 4–5 साल से पहले

1.3.2 प्रतीक–काल अवस्था : 4–5 से लेकर 8–9 साल तक

1.3.3 वास्तविक–परिचय काल अवस्था : 8–9 साल से 12–13 साल तक

1.3.4 किशोर–अवस्था और उसके बाद : 13–14 साल से आगे

1.3.1 कीरम–कांटे अवस्था : यह अवस्था बच्चों की शारीरिक हलचल और साधनों से परिचय की अवस्था है। जमीन पर अंगुलियों से लकीरें खींचना या फिर कागज पर आड़ी–तिरछी घसीटना, इस अवस्था के बच्चों की विशेषता होती है। हाँलांकि उनके द्वारा खींची गई लकीरें किसी खास विषय से संबंधित नहीं होती हैं। बच्चा बड़ों की तरह हाथ चलाने की कोशिश करने लगता है।

1.3.2 प्रतीक–काल अवस्था : पेंसिल पकड़ने, हाथ घुमाने या चलाने की क्षमता आने के बाद बच्चें वैसे चित्र या रचना करना शुरू करते हैं, जिसमें आकार का संबंध होता है। वे जो भी अनुभव करते हैं उन्हें आकारों के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। वह चीजों को जैसा जानता है, अनुभव करता है वैसा चित्र बनाता है न कि वस्तु जैसी दिखती है वैसा । एक बच्चा इस अवस्था में कई चीजों से संबंधित प्रतीक बना लेता है। इस अवस्था के चित्र प्रतीक प्रधान होते हैं। जैसे बच्चा आदमी के चेहरे के लिए गोला और उसके अन्दर तीन–चार छोटे–छोटे गोले कुछ लकीरें बनाता है। (दो आँख, नाक की लकीर या गोला और एक मुँह) इसी तरह हर वस्तु के प्रतीक नए–नए अनुभवों के आधार पर उसके दिमाग में बनते और बदलते रहते हैं। बच्चा अभी तक अंतर्मुखी होता है।

1.3.3 वास्तविक–परिचय काल अवस्था : बच्चों में अनुभव के साथ–साथ प्रतीकों की व्यवस्था भी बदलती जाती है। अनुभव का असर चीजों के प्रतीक पर पड़ता है। जो क्रमशः विकसित

होता है, उसमें कुछ चीजें जुड़ जाती हैं या बदल जाती हैं जैसे –पूर्व की अवस्था में आदमी के चेहरे के प्रतीक में इस अवस्था में नाक, कान, बाल आदि भी जुड़ जाते हैं। यहाँ आकार के साथ–साथ तुलना भी होने लगती है। अतः बच्चा वास्तविकता के बारे में अधिक सचेत हो जाता है इसलिए इस अवस्था को वास्तविक–परिचय–काल कहा जाता है।

वस्तुतः इस अवस्था में बच्चें बहिर्मुखी होने लगते हैं। उसकी दुनिया बदलने लगती है। वे बाहर की दुनिया के साथ अपना संबंध समझने लगते हैं। उनकी आत्म अनुभूति और अभिव्यक्ति का स्वरूप भी बदल जाता है। बाह्य दुनिया की वास्तविकता से परिचय का अनुभव उनके विचारों एवं नजरियें को वास्तविकता प्रधान बनाता है। अतः उनके चित्र और अन्य कृतियाँ भी वास्तविक होने लगती हैं। वास्तविक – परिचय अवस्था बच्चे के सामाजीकरण और सामाजिक अंतः क्रिया से भी प्रभावित होती है। एक सामाजिक प्राणी के रूप में उसके अस्तित्व का भाव उन्हें स्वयं के साथ अपने समाज के लिए भी कुछ करने के लिए प्रेरित करता है।

1.3.4 किशोर अवस्था : किशोरावस्था बच्चों के लिए एक नया अनुभव होता है। उनमें शारीरिक और मानसिक बदलाव होते हैं। इन बदलावों का प्रभाव कला की अभिव्यक्ति पर भी दिखाई पड़ता है। वे जब कोई चित्र बनाते हैं, किंतु वह उतना वास्तविक नहीं बनता जितना होना चाहिए। यह उनको परेशान करता है। उसकी आँखे वस्तु में और उसके चित्र में कोई फर्क नहीं चाहती लेकिन हाथ हार मान जाता हैं उसकी हिम्मत टूट जाती है और कला तरफ से उसका दिल हटने लगता हैं। यद्यपि यह अवस्था विकास की प्राकृतिक सीढ़ी है, लेकिन इस अवस्था में कला शिक्षकों या सुसाधकों द्वारा अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

1.3.5 बच्चों का रंग बोध एवं बाल कला की विशेषताएँ : उपरोक्त चर्चा में हमने बाल कला की विभिन्न अवस्थाओं के बारे में जाना। इन अवस्थाओं को बच्चों के विकास के संदर्भ में भी देखा जा सकता है। विद्यालय में प्राथमिक कक्षाओं में प्रवेश लेने वाले बच्चे मूलतः प्रतीक काल अवस्था में होते हैं। बच्चों में 4–5 से लेकर 8–9 साल तक प्रतीक काल रहता है। यह अवस्था बच्चों की सृजनात्मकता प्रवृत्ति के लिए सबसे अधिक क्रियाशील होती है। इस दौरान

बच्चें जिस प्रकार के चित्र बनाते हैं उनमें प्रतीक और आकृति के दृष्टिकोण से बड़ा अंतर होता है। साथ ही, रंगो के चुनाव में अपनी एक विशेषता होती है। बच्चों के चित्र में उपयोग किए गए रंग बिल्कुल निराले हो सकते हैं। वस्तुतः बच्चें वास्तविक रंगो की नकल नहीं करते बल्कि अपने चुनाव के अनुसार रंगों का उपयोग करते हैं, यह गुण बुनियादी तौर पर सृजनात्मक प्रवृत्ति का अंग होता है न कि नकल का। मजेदार तथ्य यह है कि शुरू –शुरू में जब बच्चों को रंगो का डिब्बा मिलता है तो उसे रूचि से देखते और परीक्षण करते हैं। वे रंगो से शुरू–शुरू में जब चित्र बनाते हैं तो उनका पूरा चित्र एक ही रंग की रेखाओं से बनता है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि जो भी रंग वे हाथ में लेते हैं उससे वे इतना मुग्ध हो जाते हैं कि उन्हें दूसरे रंग का ख्याल भी नहीं रहता। यह अवस्था कुछ दिनों तक चलती है। फिर वे एक के बदले दो और फिर अधिक रंगों का इस्तेमाल करने लगते हैं। रंगों के पहले अनुभव में जो चुनाव बच्चा करता है, वह रंग के डिब्बे से करता है। बाद में चुनाव उसकी 'मानसिक चित्र योजना' द्वारा निश्चित होने लगता है।

अगर हम प्रतीकों की बात करें तो यह देखा जाता है कि प्रतीक सरल होते हैं, जो एक दो या तीन की संख्या में होते हैं। पुनः बच्चें जिस स्थान का प्रयोग अपनी कला के लिए करते हैं उसके केवल एक भाग का उपयोग उनके द्वारा होता है। एक ही कागज या दिए गए स्थान पर वे एक से अधिक चित्र बनाते हैं। जरूर नहीं कि सभी चित्र परस्पर सम्बद्ध हो।

एक और मजेदार विशेषता है बच्चों द्वारा कागज के बाँये उपर वाले कोने से चित्र बनाना और आगे बढ़ना लगभग उसकी प्रकार होता है जैसे बड़े बाँये से दाँये की ओर लिखते हैं।

बाद की अवस्था में बच्चा अपने प्रतीकों में समन्वय निर्माण के साथ–साथ उन्हें विचारों से भी संबद्ध करने लगते है। चित्रों के पृष्ठभूमि में भी रंग आने शुरू हो जाते हैं, कागज की जगह का पूरा–पूरा उपयोग होने लगता है। धीरे–धीरे चित्रों की रचनाओं में तीसरी विमा (third dimension) का प्रयोग नजर आने लगता है। पहले तो चीजों का आगे –पीछे रहना, एक–दूसरी चीजों की गहराई के हिसाब से उनके आगे –पीछे बनाना शुरू होता है। फिर

प्रत्येक वस्तु की लंबाई–चौड़ाई के साथ–साथ उसकी मोटाई या गइराई पर भी ध्यान जाता है। उनके चित्रों में परिप्रेक्ष्य (पर्सपेक्टिव) का भी प्रवेश होने लगता हैं।

वास्तविकता परिचय काल का समय बारह–तेरह साल की उम्र तक रहता है। इसका विशेष महत्व है । इसमें बच्चे की कल्पना–शक्ति के ऊपर उसकी विवेचनात्मक शक्ति की प्रधानता हो जाती है। दृष्टि –आधारित अनुभवों की प्रधानता के कारण बारीकियों पर अधिक नजर रहती है। इसी कारण बच्चा अपने चित्र में भी उन बारीकियों को दिखाना चाहता है। उसकी पूरी दृष्टि ही दृष्टि–प्रधान हो जाती हैं।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि बाल्यावस्था में बच्चें जो कुछ भी देखते, सुनते या अनुभव करते हैं, उसे वे आत्मकेन्द्रित नजर से अपनाते हैं। उन्हें लगता है कि जो कुछ भी है, वह उसी के चारों ओर है और उसके लिए है। यानी वे अपने–आप में ही वास करते हैं । इसलिए जो कुछ भी अभी तक वे करते रहते हैं उससे पूरा–पूरा संतुष्ट होते हैं। अभी तक उसकी दृष्टि अन्तर्मुखी होती है। 12 साल की उम्र में जब वे बड़ों की दुनिया के प्रवेश द्वार पर पहुँचते हैं उनका अपना मापदंड काम नहीं करता। अब वे बचपन की बातों को दुहराने से संकोच करते हैं।

अब उनकी सोच में सामाजिक अभिव्यक्ति नजर आने लगती है। बाहर के जगत के बारे में संज्ञान होने पर उनका नजरीया बहिर्मुखी होने लगता है। आज के समाज के स्वरूप के कारण उनके साथ उनकी बचपन की कला–कृतियाँ मेल नहीं खाती। जब वे कुछ करते हैं तो उनकी कोशिश यह होती है कि उसे बड़ो जैसा ही करें। ऐसा करने के पीछे उनके समाजीकरण की भूमिका होती है।

1.3.6 क्षेत्रीय कला एवं शिल्प परिचय

शिक्षा व्यवस्था बच्चों को उनके सांस्कृतिक संदर्भो से अलग कर पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकती है। हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है, इसे पहचान कर कक्षाओं में स्थान देना होगा।

हमारे समाज में लोक व्यवहार की शिक्षा का प्रचार प्रसार कला की विभिन्न विधाओं के द्वारा सैकड़ो वर्षो पूर्व से होता आ रहा है। इन विधाओं के द्वारा नैतिक शिक्षा, सामाजिक प्रदर्शन अलग–अलग वर्ग विशेष के द्वारा होता है।

इन समस्त विधाओं का आधार इनकी सामूहिक प्रस्तुति है। जिसे समाज में लोकप्रियता और स्वीकार्यता प्राप्त है। छत्तीसगढ़ में इन सर्वव्याप्त विधाओं का उपयोग शालेय शिक्षा में किया जाए तो अध्यन–अध्यापन अधिक प्रभावी हो सकता है। इससे बच्चा अपनी चिर–परिचित भाषा और अंदाज में अध्ययन कर सकेगा। अपनी संस्कृति से जुड़ा रहेगा। अध्ययन अध्यापन सुरूचिपूर्ण और सक्रिय होगा। छत्तीसगढ़ की कुछ कलाओं व शिल्पों का विवरण इस प्रकार है:–

1.3.7 लोक चित्रकला –

छत्तीसगढ़ में चित्रकला के अन्तर्गत आदिम मानव के बनाये हुए रेखाचित्रों से लोकचित्रों के उद्‌भव व विकास की यात्रा का अविरल प्रवाह है।

छत्तीसगढ़ की चित्रकला मुख्य रूप से भित्तित्रिच व भूमि रेखांकन के माध्यम से दिखाई देती है। ग्रामीण क्षेत्रों में मिट्‌टी की दीवारों पर लोक चित्रकार विभिन्न प्रकार से रेखाचित्र बनाते हैं। छत्तीसगढ़ में इसे कई अलग–अलग नामों से जाना जाता है व पर्वो के आधार पर बनाया जाता है। जैसे बेतिया, बिहई चौक, डंडा चौक, चांदनी, संकरी, सार्थिया, कमलगट्‌टा, हांडा, चकरीखूट, पंडुम, गोलावरी, संखचूर, मखना–बानी, कांदापान, कुसियारी, मानिक, पिढ़हाई, पुरइन पान, समुंद लहर, लक्ष्मी पांव आदि।

1. **डंडा चौक** – सामान्य पूजा पाठ या किसी खास प्रयोजन जैसे दशहरा की पूजा में इस चौक को बनाया जाता है। आटे से या कभी–कभी धान से भी इस चौक को पूरा किया जाता है। इसके ऊपर पीढ़ा रखकर पूजा प्रतिष्ठा की जाती है।
2. **बिहई चौक** – विवाह के समय इस प्रकार के चौक को मायने के दिन पांच दल वाला चौक कन्या तथा सात दल वाला चौक वर के घर बनाया जाता है। इसमें चावल आटे का उपयोग किया जाता है।
3. **छट्‌ठी चौक**– शिशु जन्म के छठे दिन छट्‌ठी मनाई जाती है। इस दिन वर्तुलाकार चौक बनाकर इस पर होम–धूप दिया जाता है। शिशु के बढ़ने की प्रक्रिया को ध्यान में रखकर इसे बनाया जाता है।
4. **गुरूवारिया चौक**– इस तरह के चौकों को अगहन गुरूवार का व्रत करते समय बनाया जाता है। इसके बीच में देवी लक्ष्मी के पांव का चित्र बनाये जाते हैं व चारो ओर स्वस्तिक का चिन्ह बनाया जाता है।
5. **भित्ति चित्र** – जिन दिनों मानव गिरी–कंदराओं में रहा करता था तभी वह दीवारों को रंगने की कला को सीख गया था । रायगढ़ के पास स्थित कुबरा पहाड़ की गुफाओं की भित्ती शैली इसके स्पष्ट उदाहरण हैं।

6. द्वार सज्जा – प्रदेश में परम्परा है कि घरों में दरवाजें के तीनों ओर एवं नीचे के देहरी को आकर्षक ढंग से सजाते हैं । घर की महिलायें जब त्यौहारों पर घर की लिपाई–पुताई करती हैं तब चौखट के चारों ओर की सजावट भी करती है। इनमें रंगो, चूना, नील, पीली मिट्टी का उपयोग किया जाता है।

7. कोठी सज्जा – छत्तीसगढ़ में अन्न भंडार को कोठी या ढोली और बड़े आकार के भंडार को ढाबा कहा जाता है। ढोली या कोठी आकार में छोटी होती है और मिट्टी की बनी होती है। लोग इस पर भी अपने सौंदर्य बोध व कलात्मकता के भाव को आकार देते हुए कुछ न कुछ प्रतीक या घटना को मिथक के रूप में उकेर देते हैं।

8. आठे कन्हैया – भादो मास के आठे (अष्टमी) को कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व छत्तीसगढ़ अंचल में काफी धूमधाम से मनाया जाता है। इसे यहां आठे कन्हैया कहा जाता है। इस अवसर पर श्रीकृष्ण से संबंधित विभिन्न घटनाओं का चित्रांकन किया जाता है।

9. हाथा – हाथ से बनाये गये थापों को हाथा कहा जाता है। छत्तीसगढ़ में आमतौर पर दो अवसरों पर हाथा बनाया जाता है। एक तो नये घर बनाये जाने पर प्रतिष्ठा करते समय, दूसरा हाथा राउत जाति के महिलाओं द्वारा गोर्वधन पूजा के समय बनाया जाता है।

लोकनाट्य

छत्तीसगढ़ी लोकनाटयों से हमारा अभिप्राय उन नाटकों से है जो यहां के ग्राम्य वातावरण में अंकुरित और विकसित हुए हैं। इस प्रकार के नाटकों में रंग–मंचीय शास्त्रीयता नहीं, इनमें अभिनय की सरलाता एवं आडम्बरहीनता मिलती है। ये जन साधारण के द्वारा सर्व साधारण के मनोरंजनार्थ अभिनीत होते हैं। छत्तीसगढ़ लोकनाट्यों के पात्र पुरूष ही होते हैं। इनकी भाषा भी छत्तीसगढ़ी हुआ करती है। इससे भावों को सहज संप्रेषण हो जाता है। इनके पात्र ऐतिहासिक एवं पौराणिक भी होते हैं। पात्र यहां की जन–संस्कृति के अनुरूप अभिनय करते हैं जिससे उनके द्वारा यहां की संस्कृति की सुंदर संवहन होता है। कुछ प्रमुख लोक नाट्य इस प्रकार हैं–

1. रहसलीला – छत्तीसगढ़ लोकनाट्यों में ''रहसलीला–– का विशेष स्थान है। ये भारतीय संस्कृति की मुख्य धारा में छत्तीसगढ़ के संबंध को उजागर करते हैं। रहसलीला श्रीमद् भागवत में वर्णित राधा –कृष्ण की रासलीला की कथा के गान का रूप है।

2. गम्मत – छत्तीसगढ़ लोकनाट्य ''गम्मत'' प्रहसन का पर्याय जान पड़ता है। इसका मुख्य उद्देश्य दर्शकों के मनोरंजन के साथ–साथ हास्य व्यंग की शैली में सामाजिक बुराईयों और पाखंडो पर प्रहार करना होता है। यह लोकनाट्य लोक चेतना के जागरण का एक कलात्मक उपक्रम है । गम्मत में प्रस्तुत कथा अलिखित होती है लोक जीवन के लेकर पाखंड, अर्थ लोलुपता, दहेज और नशाखोरी जैसी विद्रुप दशाओं पर गम्मत की कथा आधारित होती है।

3. नाचा – छत्तीसगढ़ी का लोकप्रिय लोकनाट्य है– ''नाचा''। यह लोकानुरंजन की प्रुमुख विधा है। इसे कहीं छैलानृत्य तो कहीं छैला पार्टी भी कहा जाता है। नाचा छत्तीसगढ़ की

सर्वाधिक प्रासंगिक लोकनाट्य है। नाचा के प्रमुख कथा प्रसंग है – सास–बहू का झगड़ा, देवरानी–जेठानी का विवाद–संवाद, पति–पत्नी का झगड़ा एवं प्रेम, ननद–भौजाई की छेड़छाड़, के प्रसंग आदि। नाचा का आयोजन खुल मंच पर किया जाता है। नाचा का उद्देश्य दुःख–दर्द से लेकर मनोरंजन के साथ जनजीवन को सही दिशा दिखाना होता है।

4. मावोपाटा– मावोपाटा मुरिया जनजाति का एक अद्भुत शिकार नृत्य है। इस नृत्य के दौरान लोक नृत्य–वाद्य ''टिमकी'' ओर ''कोटोड़का'' बजाया जाता है। बस्तर के आदिम जीवनमें मुरिया जनजाति का यह लोकनाट्य अपनी संपूर्ण पारंपरिकता के साथ मंच पर प्रस्तुत होता है।

5. भतरा नाट – भतरा नाट्य नृत्य प्रधान लोकनाट्य है। भतरानाट को उड़िसा नाट भी कहा जाता है क्योंकि इसका आगमन ओडीशा से हुआ है। छत्तीसगढ़ के बस्तर संभाग में भतरा नाट का आयोजनों व प्रमुख रूप से किया जाता है। विस्तृत मैदान में खुले मंच पर ग्रीष्म ऋतु में आयोजित होने वाले भतरानाट के कथानक प्रमुख रूप से पौराणिक होते हैं। जिसमें मेघनाद शक्ति, लंका दहन, जरासंघ वध, कीचक वध, रावण वध एवं अभिमन्यु वध आदि प्रमुख हैं। इस नाट की मुख्य भाषा ''भतरी'' होती है।

6. खम्म स्वांग – कोरकू जनजाति में आयोजित होने वाला यह लोकनाट्य दीपावली के बाद प्रारंभ होता है। इस लोकनाट्य में लंकापति रावण के पुत्र मेघनाद की स्मृति में कोरकू ग्राम के मध्य एक मेघनाथ खम्म –स्थापित किया जाता है और इसी के आसपास कोरकू जनजाति के लोग नवीन खेल खेलते हैं। कोरकू जनजाति मेघनाद को अपना रक्षक मानती है।

7. दहिकांदो – छत्तीसगढ़ के आदिवासियों के मध्य दहिकांदों एक लोकप्रिय लोकनाट्य है इस नाट्य में प्रभु श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव के अवसर पर किसी वृक्ष के नीचे कृष्ण–राधिका की प्रतिमा स्थापित कर अति सुंदर कृष्ण लीला का मंचन होता है। वस्तुतः यह करमा और रास का सम्मिलन भी कहा जा सकता है। यह लोकनाट्य अद्भुत उत्साह एवं धार्मिक मर्म से ओतप्रोत है।

1.3.8 छत्तीसगढ़ में रंगकर्म की परंपरा

छत्तीसगढ़ में रंगकर्म का इतिहास मौर्यकाल में निर्मित जोगीमाड़ा गुफा से प्रारंभ होता है, जो रामगढ़ की पहाड़ी पर स्थित है। ऐतिहासिक कालखंड के अनुसार यह गुफा ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी की मानी गई है। 18वीं शताब्दी का पूर्वार्ध छत्तीसगढ़ के रंगकर्म के इतिहास का युगांतर कालीन दौर था जब मराठा रंगकर्म, गम्मत व नाचा की विधाओं का पूर्ण विकास हुआ। अगस्त 1919 में जन्मी इप्टा रायपुर के रंगकर्म से जुड़ी अत्यंत महत्वपूर्ण संस्था है। यह अपनी प्रस्तुतियों द्वारा लगातार धर्म निरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक मूल्यों के लिये संघर्ष करती आ रही है। यह संस्था मुक्तिबोध नाट्य स्पर्धा आयोजित कर रही है। नुक्कड़ नाटक, नाट्य शिविर, कविता, पोस्टर, प्रदर्शनी नाट्य गोष्ठियां और जनगीतों के माध्यम से इप्टा सतत् सांस्कृतिक

आयोजन का संचालन करती आ रही है। हबीब तनवीर, सत्यदेव दुबे छत्तीसगढ़ के प्रमुख रंगकर्मी हैं।

1.3.9 थियेटर –

थियेटर जिसे गम्मत के नाम से जानते है। पंडवानी छत्तीसगढ़ का प्रसिद्ध लोकनाट्य है। जिसमें सामान्यतः महाभारत की कला का गायन किया जाता है।

1.3.10 छत्तीसगढ़ फिल्म जगत

इस क्षेत्र की गायन, नृत्य, नाट्य व अन्य सांस्कृतिक कलाएँ समृद्ध रही हैं। छत्तीसगढ़ में फिल्मों का निर्माण इसी सांस्कृतिक विकास का प्रयास है। प्रथम छत्तीसगढ़ी फिल्म ''कहि देबे संदेश'' है तथा सर्वाधिक सफल एवं रंगीन फिल्म ''मोर छईयां भुईंया'' है। आज छत्तीसगढ़ फिल्म जगत अत्यंत समृद्ध और लोकप्रिय है।

1.3.11 छत्तीसगढ़ के लोकगीत –

1. करमा गीत– करमा नृत्य के साथ जो गीत गाये जाते हैं वे करमा गीत कहलाते हैं। ये गीत आनंद और मनोरंजन के लिए होते हैं।

2. डंडा गीत – ''डंडा नाच' छत्तीसगढ़ का प्रिय नृत्य है। इस नृत्य के साथ जो गीत गाये जाते हैं उन्हें डंडा गीत कहा जाता है। डंडा नृत्य केवल पुरूषों का नृत्य है। यह होली त्यौहार के समय प्रमुखतः नाचा जाता है एवं साथ में गीत भी गाए जाते हैं।

3. ददरिया – ददरिया गीतों को गीतों का राजा कहा जाता है इसे ''बन भजन'' अथवा साल्हा भी कहते हैं। छत्तीसगढ़ के ददरिया गीत, खेतों, खलिहानों में कृषि कार्य करते हुए अथवा अन्य श्रम के कार्य करते समय गाये जाते हैं।

4. बॉस गीत – राऊत जाति का यह प्रमुख गीत है। कृष्णानुयायी होने के कारण ही बंशी से इन्हें विशेष स्नेह है। इनके पास लम्बे मोटे बांस की बनी हुई एक बहुत बड़ी बांसुरी होती है, जिसे बॉस कहा जाता है। इसी बांस को बजाकर ये लोगों का मनोरंजन करते हैं।

5. देवार गीत – देवार जाति के लोग व्यवसायिक लोक संगीतकार एवं लोक कलाकार हैं। नाच गा कर, बंदर भालू आदि के खेल दिखाकर ये लोगों को मनोरंजन करते हैं।

6. पंथी गीत – पंथीगीत में मुख्यतः गुरूघासीदास जी की जीवनी तथा उनके उपदेशों का वर्णन होता है।

7. जवारा गीत – छत्तीसगढ़ के जवारा शक्ति का प्रतीक है। नवरात्री पर्व में पांच या सात प्रकार के बीज डालकर इसे बोया जाता है। जवारा के सेवक इस अवसर पर जवारा गीत गाते हैं।

8. भोजली – श्रावण में जब चारों ओर हरियाली बिखर जाती है तब श्रावण शुक्ल नवमी का भोजली बोयी जाती है। टोकरियों, छोटे मिट्टी के घड़ों में बीजों को अंकुरित किया जाता है। इस अवसर पर तांत का बना एक वाद्य यंत्र बजाकर नारियों द्वारा गीत गाये जाते हैं। भोजली गीतों में भोजली का बढ़ना और उसकी पूजा का विशेष महत्व है।

9. विवाह गीत – विवाह के अवसर पर विभिन्न प्रकार के गीत गाये जाते हैं। जिनमें से प्रमुख हैं चुलमाटी, तेलचघी, मायागौरी, नहडोरी, भड़ौनी, परघनी आदि।

10. सुआ गीत – सुआ गीत फसल पकने पर दीपावली के समय गाया जाता है। ये गीत महिलाओं द्वारा गाये जाते हैं।

11. वादन (लोकवाद्य) – जो वाद्यों को तार से बजाते हैं वे तार वाद्य कहलाते हैं। वे वाद्य जो फूंक से बजाते है, फूंक वाद्य हैं जैसे –बासुंरी, पूंगी, अलगोजा आदि। जो खाल के बने होते हैं वे खाल वाद्य के क्षेत्र में आयेंगे, जैसे – नगाडा, ढोलक, तारा आदि। आधे ताल के वाद्यों में समय लय या स्वर नहीं होता, उनके द्वारा केवल छन–छन या टन–टन की आवाज होती है। शास्त्रीय संगीत के वाद्य इनसे भिन्न हैं और भिन्न–भिन्न राज्यों में भिन्न भिन्न प्रकार के लोक वाद्य भी हैं। प्रायः ढोलक, तबला, नगाडा, ढपली, मृदंग, मंजीरें में एक तारा का प्रयोग किया जाता है।

1.3.12 प्रमुख संगीत संस्थान – छत्तीसगढ़ का अतीत सदैव संगीत साधना का प्रमुख स्थल रहा है। कला सम्राट राजा चक्रधर सिंह हो या कमलनारायण सिंह या राजा दृगपाल सिंह हो या राजा भूपदेव सिंह सभी ने संगीत साधना के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की थी। इंदिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़, छत्तीसगढ़ का ही नहीं अपितु देश एवं संपूर्ण एशिया में अपनी तरह का विशिष्ट कला संस्थान है, जहां संगीत एवं ललित कलाओं की विधिवत शिक्षा दी जाती है। रायपुर का कमला देवी कला संगीत महाविद्यालय एवं श्रीराम संगीत महाविद्यालय प्रमुख संगीत संस्थान हैं। बिलासपुर में स्थित भातखंडे संगीत महाविद्यालय तथा राजनांदगांव एवं कवर्धा में स्थापित शारदा संगीत महाविद्यालय भी राज्य के प्रमुख संगीत केन्द्र है।

1.3.13 लोकनृत्य –

लोकनृत्य में छत्तीसगढ़ की लोककला का प्राणत्व है। छत्तीसगढ़ के प्रमुख लोकनृत्य सुआ, करमा, पंथी, राउत–नाचा, नाचा, चंदैनी, गेड़ी नृत्य, परब नृत्य, दोरला, हुलकी व मांदरी नृत्य, ककसार, सरहुल, सैला आदि हैं। वस्तुतः गीत, संगीत और नृत्य, छत्तीसगढ़ के जीवन में रचे बसे हैं।

कुछ प्रमुख नृत्य इस प्रकार हैं–

1. सुआ नृत्य – महिलाऍ व किशोरियाँ यह नृत्य बड़े ही उत्साह व उल्लास से उस समय प्रारंभ करती हैं, जब धान के पकने का समय पूर्ण हो जाता है।

2. पंथी –नृत्य – छत्तीसगढ़ में निवास करने वाली सतनामी सम्प्रदाय का यह परंरागत नृत्य है। माघ महीने की पूर्णिमा को गुरू घासीदास के जन्मदिन पर सतनामी सम्प्रदाय के लोग जैतखाम की स्थापना करके उसका पूजन करते हैं और फिर उसी के चारों तरफ गोल घेरा बनाकर गीत गाते हैं, नाचते हैं।

3. राउत नाचा – दीपावली के तुरंत बाद राऊत जाति द्वारा नृत्य का सामूहिक आयोजन किया जाता है। वे समूह में सींग बाजा के साथ जिनके पशुधन की देखभाल करते हैं, उनके घर जाकर नृत्य करते हैं। राऊत जाति का प्रिय नृत्य लाठी या डंडा नृत्य होता है। इसका मुख्य वाद्य नगाड़ा या टिमकी होता हैं। इस नृत्य में दोहे बोले जाते हैं। उदाहरण –

"काला पानी जमुनाजी के, लक्ष्मण देखि डराय हो।
एक पुत्र अंजनी के भैया, छिन आवय छिन जाए हो।"

4. चंदैनी नृत्य – छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में लोक कथाओं पर आधारित यह एक प्रमुख लोकनृत्य है। लोरिक चंदा के नाम से ख्यातिलब्ध चंदैनी मुख्य रूप से एक प्रेमगाथा है। जिसमें पुरूष पात्र विशेष पहनावे में अनुपम नृत्य के साथ चंदैनी कथा को अत्यंत ही सम्मोहक शैली में प्रस्तुत करते हैं।

5. जनजातीय नृत्य – जनजातीय परम्पराओं में नृत्य का बहुत महत्व है। जनजातीय जीवन का उल्लास एवं उनके आनंद का चरम उनके नृत्यों की थाप में बसता है। प्रकृति की गोद में पलने बसने वाला वनवासी अपनी परम्परागत् संस्कृति का अनुसरण करता है।

1. **करमा** – करमा नृत्य, कर्म देवता को प्रसन्न करने के लिए किया जाता है। करमा नृत्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत है।
2. **करसाड़** – यह अबुझमाड़ियों का एक विशेष पर्व है जिसमें गोत्रदेव की पूजा की जाती है। इस अवसर पर यह नृत्य किया जाता है। करसाड़ नृत्य में नर्तक की रूप सज्जा विशेष आकर्षक होती है।
3. **परघौनी** – आदिवासी के कुछ नृत्य ऐसे हैं जो एक विशेष अवसर और अनुष्ठान से संबंधित होते हैं। बैगा आदिवासियों में ''परघौनी'' नृत्य विवाह के अवसर पर किया जाता है।
4. **दशहरा नृत्य और ददरिया** – यह नृत्य बैगा आदिवासियों में प्रचलित है। बैगा आदिवासियों में दशहरे का पर्व नहीं मनाया जाता किन्तु विजयादशमी के दिन से प्रारंभ होने के कारण नृत्य का नाम दशहरा नृत्य पड़ा।
5. **सैला नृत्य** – इस नृत्य का पूरा नाम सैलारींवा है। इस नृत्य की शुरूआत शरद पूर्णिमा से होती है। सैला मुख्य रूप से गोड़, बैगा, परधान आदि जनजातियों में किया जाता है।
6. **दोरला नृत्य** –बस्तर की दोरला जनजाति का प्रमुख नृत्य है। इस नृत्य में स्त्री–पुरूष दोनों सहभागी रहते हैं । मुख्य रूप से यह एक पारंपरिक नृत्य है जिसमें पुरूष पंछे (रूमाल) एवं स्त्रियां पारंपरिक आभूषण पहनती हैं।?
7. **फाग नृत्य** – यह छत्तीसगढ़ का लोकप्रिय लोकनृत्य है। आदिवासी समुदाय के गोड़ एवं बैगा जनजाति के लोग विशेष रूप से होली के अवसर पर आयोजित करते हैं । इस नृत्य में लकड़ी के मुखौटे एवं लकड़ी की चिड़िया आदि का प्रयोग करते हुए गांव के समस्त

युवक–युवती एवं प्रौढ़ भी उल्लास के साथ हिस्सा लेते हैं। विभिन्न स्वरूपों में यह नृत्य आज हर समुदाय में प्रचलित है।

1.3.14 लोकशिल्प– छत्तीसगढ़ के कलाकार, मिट्‌टी, बांस, पीतल, लोहा, लकड़ी आदि से विभिन्न प्रकार की आकर्षक वस्तुएं बनाते हैं। इनमें विशेष आकृतियां बनाकर रंग–सज्जा, बेल–बूटे, फूल–पत्ती एवं जानवर आदि उकेर कर आर्कषक बनाया जाता है। इनके द्वारा बनाई गई चीजें बाजारों में ऊंचे दामों पर बिकती हैं। छत्तीसगढ़ राज्य के शिल्प कला की पहचान देश–विदेश में है। राज्य के कुछ प्रमुख शिल्प इस प्रकार हैं–

काष्ठ शिल्प –

लकड़ी को गढ़कर विभिन्न चीजें बनाना बस्तर अंचल की प्रसिद्ध कला है। बस्तर अंचल में चाकू, हंसिया, खेती के औजारों के मूंठ, लकड़ी के पीढ़े, कंघियों, बांसुरी तथा सजावट की सभी चीजों में नक्काशी अत्यंत कलात्मक होती है। घरों के नक्काशीदार स्तंभ व दरवाजे, मंदिरों के खंभे, देवझूला आदि काष्ठ शिल्प के अद्‌भुत नमूने हैं। साथ ही लोक नृत्यों में उपयोग किए जाने वाले लकड़ी के मुखौटे भी बहुत कलात्मक होते हैं।

मृदा शिल्प –

मिट्‌टी के बर्तन, देव प्रतिमाएँ, अनाज रखने की कोठियाँ, दीप स्तंभ आदि बनाने की कला छत्तीसगढ़ में आज भी बरकरार है। बस्तर के टेराकोटा का शिल्पकला में विशेष स्थान है। इस शिल्प में जीवन और प्रकृति से जुड़ी वस्तुओं के साथ ही धार्मिक प्रतीकों की आकृतियाँ भी बनाई जाती हैं। इन कलाकृतियों की लोकप्रियता देश के कोने–कोने तक पहुंच चुकी है।

धातु शिल्प –

पारम्परिक शिल्प में लौह शिल्प का प्रमुख स्थान है। बस्तर के लौह शिल्पी देवी–देवताओं की पूजा–आराधना के लिए विभिन्न कलाकृतियों का निर्माण करते हैं। लौह शिल्प का उपयोग सजावटी सामग्री के रूप में भी काफी लोकप्रिय है।

घड़वा शिल्प –

बस्तर में घड़वा जाति के लोग कांसे व पीतल की कलाकृतियाँ बनाते हैं। धातुओं को पिघलाकर सांचो की मदद से कई प्रकार की आकृतियाँ बनाते हैं। इसे घड़वा शिल्प कहा जाता है।

बांस शिल्प – बांस की विभिन्न आकारों की टोकरियों को लोगों द्वारा अलग–अलग तरह से उपयोग किया जाता है। विवाह व अन्य धार्मिक कार्यों में भी इनका उपयोग किया जाता है। छत्तीसगढ़ में विवाह हेतु बांस से कलात्मक झांपी (एक प्रकार की कलात्मक ढक्कनदार टोकरी) पंखे और दूल्हे के सिर पर लगाए जाने वाले मौर (मुकुट) बनाए जाते हैं।

रजवार भित्ति शिल्प – रजवारों की गृहसज्जा शैली अद्‌भुत है। घर की खिड़कियों और बरामदे के लिए सुंदर जालियाँ बनाई जाती है। इनके अलावा दीप, सर्प, पशु–पक्षी आदि की

कलाकृतियाँ भी बनाई जाती हैं। सफेद मिट्टी और स्थानीय रंगो से कलाकृतियों को जीवन्त किया जाता है।

गतिविधिः–

- आप अपने क्षेत्र में प्रचलित लोक नृत्यों का अवलोकन कर उनकी विशेषताओं जैसे– वेश–भूषा, भाषा, धुन श्रृंगार और वाद्य आदि की जानकारी प्राप्त कर किसी एक लोकनृत्य पर रिपोर्ट तैयार करें।
- आप अपने क्षेत्र के लोक कलाकारों/शिल्पकारों से संपर्क कर उनकी कला/शिल्प का प्रदर्शन अपने विद्यालय में करवाएं एवं उनकी कला/शिल्प को सीखने का प्रयास करें।
- अपने विद्यालय में कला महोत्सव का आयोजन कर विद्यार्थियों द्वारा बनाई गई/सीखी गई कलात्मक वस्तुओं की प्रदर्शनी लगाएं।

कला शिक्षण विधि के रूप में– कला का सीधा संबंध हमारी ज्ञानेन्द्रियों से है। यह मनुष्य के विचारों और भावों को प्रकट करने की भाषा है। यह कोई पृथक ज्ञान नहीं है बल्कि हमारे दैनिक जीवन का ही हिस्सा है, जिसका प्रयोग हम किसी न किसी रूप में करते रहते हैं। यह शिक्षक और विद्यार्थियों को एक व्यापक फलन प्रदान करती है। जिससे वे तथ्यों और विचारों को आसानी से समझ सकें और अभिव्यक्त कर सकें। जब हम कला शिक्षा की बात करते हैं तो सामान्यतः दो तथ्य उभरकर सामने आते है–

- कला में शिक्षा
- शिक्षा में कला

कला में शिक्षा से तात्पर्य है कि कला की किसी खास विधा की सिद्धान्त, प्रक्रिया, तकनीक एवं नियमों का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करना। शिक्षा में कला से तात्पर्य है कि कला शिक्षा के सभी पक्षों के साथ–साथ तमाम तथ्य जो किसी व्यक्ति की वृद्धि और विकास में योगदान देते है। वस्तुतः शिक्षा में कला ज्ञान के साथ–साथ कौशल, सम्बन्धित गुणों एवं अनुभवों का संश्लिष्ट रूप है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 'कला शिक्षा' सीखने एवं अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है जबकि 'कला', सम्बन्धित रचनात्मक प्रक्रिया का उत्पाद है जो कि चित्रकला, नाटक, नृत्य, संगीत गीत आदि के रूप में प्रस्तुत होता है।

कला शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इसके अन्तर्गत वे सभी तथ्य शामिल होते है जो किसी न किसी प्रकार हमारी संवेदना और सौन्दर्यानुभूति को प्रभावित करते है।

कला शिक्षा की व्यापकता को देखते हुए इसे मुख्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :–

- दृश्य कलाः दृश्य कला से तात्पर्य कला की उन सभी विधाओं से है जिनकी कलात्मक अभिव्यक्ति को हम मूर्त रूप में देख सकते हैं जैसेः चित्रकला, drawing, painting, मूर्तिकला, design, collage, मुद्रण (print), मास्क, पुतलीकला (puppet) इत्यादि।
- प्रदर्शन कलाः प्रदर्शन कला से तात्पर्य कला की उन विधाओं से है जिसे देखा, सुना या प्रदर्शित किया जा सके जैसेः संगीत, गायन, वादन, नाटक, नृत्य, कठपुतली, मूक अभिनय इत्यादि। इनका प्रयोग विषयों के अध्ययन–अध्यापन में करने पर कराएँ। सीखना सहज व सरल हो जाएगा। इसके लिए कला के विविध रुपों का अन्य विषयों के साथ समन्वय बनाना होगा, जिसकी चर्चा आगे की इकाईयों में की गई है।

गतिविधिः–

उत्कृष्ट कलाकृतियों को देखना, कलाकारों से बातचीत करना तथा प्रकृति से जीवन्त संबंध बनाए रखना, इन तीनों बातों को नन्दलाल बसु क्यों महत्वपूर्ण मनाते हैं। इनका कला शिक्षण में क्या महत्व होगा, अपने अनुभव व विचार प्रस्तुत करें।

ईकाई –2

कला समेकित शिक्षा–अवधारणात्मक समझ

2.1 कला समेकित शिक्षा

शिक्षार्थियों के सृजनात्मक क्षमता के विकास में कला की अहम भूमिका है। कला न सिर्फ उनकी संवेदनाओं को झकझोरती है बल्कि अन्य विषयों के ज्ञान को प्राप्त करने तथा उन्हें समझने का बहुपरिप्रेक्षीय नजरिया भी सुझाती है। विद्यालयीन शिक्षा में कला की भूमिका न सिर्फ एक विषय के रूप में है, बल्कि रोचक शिक्षण प्रक्रिया के रूप में भी है। माध्यम के रूप में, सीखने की रोचक प्रक्रिया में कला समेकित शिक्षा की भूमिका अति महत्वपूर्ण है यदि हमारे विद्यालयों में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में कला समेकित शिक्षा का समावेश हो जाए तो यह न सिर्फ बच्चों के लिए रूचिकर होगा, बल्कि शिक्षक–शिक्षिकाओं के लिए भी उनकी कक्षा बालकेन्द्रित व आनन्ददायी बन जाएगी।

ऐसा देखा गया है कि कला की प्रक्रियाओं में बच्चों को अत्यधिक आनंद आता है। कला में अन्तिम उत्पाद ही महत्वपूर्ण नहीं बल्कि प्रक्रिया भी अत्यधिक महत्व रखती है। इसका मतलब यह कतई नहीं हुआ की उत्पाद कोई मायने नहीं रखता बल्कि यह तो उस बच्चे की पहचान है, उसका सृजन है, जो अपने आप में विशिष्ट होता है। लेकिन यह भी सच है कि बच्चें को कला सृजन की प्रक्रिया में आनन्द आता है। इन तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट है कि विषयों के शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में कला को एक माध्यम के रूप में उपयोग करने से बच्चे आनंद के साथ विषयों की अवधारणा आसानी से समझ सकेंगे। सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में कला का समावेश समेकित शिक्षा है।

कला की कई विधाओं जैसे दृश्य कला के अन्तर्गत चित्रकला, मूर्तिकला कई प्रकार के शिल्प जैसे मुखौटें बनाना या अन्य सामग्रियों से कई कलात्मक वस्तुओं का निर्माण तथा प्रदर्शन कलाओं में नाटक, नृत्य, गीत–संगीत आदि को विषयों के साथ जोड़कर कक्षा को आनन्ददायी बनाया जा सकता है।

कला समेकित शिक्षा के लिए शिक्षक को कला विशेषज्ञ होना आवश्यक नहीं हैं। परन्तु उसकी दृष्टि कलात्मक हो, उसे कला विधाओं की थोड़ी समझ होनी चाहिए, जिसका समावेशन वे समझदारी से विभिन्न विषयों में कर सकें। इसके लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय की सम्पूर्ण गतिविधियों में बच्चों को स्वतंत्र रूप से अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने का अवसर मिले। इस प्रक्रिया में शिक्षक को एक सशक्त योजना बनानी चाहिए। इस योजना में कुछ नवीनता, कलात्मकता हो जैसे– खड़े होने या बैठने के सधे तरीके सीखना, भिन्न–भिन्न प्रार्थनाएँ, गीत–संगीत, नाट्य, मूक अभिनय आदि का समावेश करना, प्रतिदिन विद्यालीयचर्या का समापन एक लघु प्रार्थना, गीत आदि करना। इस संपूर्ण प्रक्रिया में संवेदनशील नवाचार करने के असीम गुंजाईश मौजूद है। विद्यालय परिसर को सुरूचिपूर्ण तरीके से सजाने, म्यूजियम बनाने के लिए भी उन्हें प्रेरित किया जा सकता है।

आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक शिक्षण योजना के साथ कला को विषयों के साथ समावेशित करना सीख लें । साथ ही, ऐसी शिक्षण योजना में तरह–तरह के आईस–ब्रेकर गतिविधियों को कराने की भरपूर सम्भावना होती है जिससे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को सरस बनाने में बहुत मदद मिलता है।

2.2 कला शिक्षा का अन्य विषयों से संबंध

स्कूलों में कला शिक्षा की उपयोगिता को हम प्रायः तीन तरीकों से देखा जाता है–

- स्वतंत्र विषय के रूप में
- अन्य स्कूली विषयों को सीखने के माध्यम के रूप में तथा
- जीवन–कौशल विकसित करने के अवसर के रूप में।

कला शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न कलाओं को विभिन्न विषयों से जोड़कर सीखने–सिखाने को रोचक बनाया जा सकता है। इस संदर्भ में कुछ बातें यहाँ दी जा रही हैं –

2.2.1 भाषा व कला समेकित शिक्षा

प्राथमिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों में भाषाई कुशलताओं (सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना) के साथ–साथ कल्पनाशीलता, संवेदनशीलता आदि क्षमताओं का

विकास भी है। कला समेकित शिक्षा इन कुशलताओं एवं क्षमताओं की वृद्धि का सशक्त माध्यम है जैसे– बच्चों को बातचीत के अवसर उपलब्ध कराना, कहानियाँ एवं कविताएँ सुनाना, सुनना एवं लिखना, सिखाना आदि। जहाँ तक भाषिक कुशलताओं के अंतर्गत लेखन कौशल की बात करें तो इसकी शुरूआत बच्चें आड़ी तिरछी रेखाएँ खींचकर करते हैं। आमतौर पर शिक्षाशास्त्र की भाषा में इसे ''शुरूआती लेखन'' कहा जाता है।

गतिविधि

कक्षा में किसी चित्र को दिखाकर निम्नलिखित गतिविधि करवाई जा सकती है–

- चित्रों पर बातचीत।
- चित्रों पर कहानी की रचना करना।
- कविताओं की रचना करना।
- चित्रों पर लेख/निबंध रचना आदि

कक्षाओं में भाषा की पाठ्यपुस्तकों को ध्यान में रखकर ऐसी गतिविधियों के आयोजन से भाषा सीखना–सिखाना आसान एवं मनोरंजक बन सकता है।

2.2.2 गणित एवं कला समेकित शिक्षा

विभिन्न वस्तुओं के बीच संबंधों को समझना गणित का एक प्रमुख उद्देश्य है। गणित में गिनती, माप और आकार प्रमुख है। कला शिक्षा बच्चों को सम–असम आकारों को पहचानने, द्विआयामी या त्रिआयामी आकृतियाँ बनाने में मदद करती हैं। जिससे बच्चें लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई, क्षेत्रफल आदि का अनुभव प्राप्त करते हैं। पैटर्न के साथ–साथ स्थान, सीमा, दिशा और आवर्तन की अवधारणाएँ पहचानना शुरू कर देते हैं।

इसी प्रकार दाएँ–बाएँ, ऊपर–नीचे, उत्तर–दक्षिण, आधा मोड़ तथा पूरा मोड़ जैसी शब्दावली से न सिर्फ परिचित होते हैं बल्कि इनकी अवधारणाओं को भी समझते हैं। आइए एक गतिविधि द्वारा इन्हें समझने की कोशिश करते हैं–

गतिविधि

- सभी बच्चे कागज की पंतग बनायें।
- पंतग को विभिन्न रंगो से सजाए अथवा कोलाज का रूप दें।

- पतंग बन जाने का बाद पतंग की लंबाई, चौड़ाई तथा विकर्ण की माप लें।
- दूसरी बनायी गई पतंग की परिमित , क्षेत्रफल, विकर्ण आदि की तुलना करें।

ज्यामितीय आकारों से मिलती–जुलती प्राकृतिक और अप्राकृतिक वस्तुएँ पहचान कर उनकी सूची बनाएं। उदाहरण–

त्रिभुज	–	क्रिसमस ट्री
वृत्त	–	फल, सूर्य, लड्डू
आयत	–	मेज, पुस्तक

2.2.3 पर्यावरण अध्ययन और कला शिक्षा

हमारे चारों ओर का वातावरण हमारी संवेदनाओं को प्रभावित करती है। कला शिक्षा के माध्यम से हम पर्यावरण को समझकर उसे अभिव्यक्त कर सकते हैं। पर्यावरण को स्वच्छ रखने की सीख जितनी पर्यावरण से मिलती है उतनी ही सीख एक कलाकार अपनी रचना में पर्यावरण को कलात्मक ढंग से जोड़ते हुए दे सकता है। भूगोल एवं पर्यावरण अध्ययन के शिक्षण में क्षेत्रीय कलाओं और हस्तशिल्पों की महत्वपूर्ण भूमिका है जैसे– स्थानीय कच्चे माल की उपलब्धता पर आधारित स्थानीय हस्तशिल्प परंपराओं का उदय व विकास की जानकारी। हस्तशिल्प से संबंधित शिल्पकारों के कार्यों एवं उनके जीवन–यापन की समझ। विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं को स्थानीय शिल्पों एवं उनके द्वारा निर्मित एवं अन्य वस्तुओं से स्कूल का संग्रहालय विकसित करना।

गतिविधि

किसी समकालीन कला प्रदर्शनी/संग्रहालय/किला एवं दुर्ग/मेले में से किसी एक पर सारगर्भित रिपोर्ट तैयार करें।

गतिविधिः

1. कला समेकित शिक्षा क्या है? इसकी क्या उपयोगिता है ?
2. आप स्वयं कला को अपने शिक्षण के साथ जोड़ पाने में कितने सक्षम हैं? लिखें।

3. बच्चों के संज्ञानात्मक विकास में कला की क्या उपयोगिता हैं? उदाहरण देते हुए समझाएं।
4. कुछ ऐसे कला समेकित गतिविधियों का उदाहरण दें जिसके माध्यम से आप अपनी कक्षा में बच्चों को सक्रिय बनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।
5. कुछ ऐसे कला समेकित गतिविधियों का उदाहरण दें जिसके माध्यम से आप अपनी कक्षा में समूह भावना को प्रोत्साहित कर सकते हैं।
6. क्या कला समेकित शिक्षा के माध्यम से शिक्षक का कार्य आसान हो जाता है? क्यों या क्यों नहीं।
7. आप प्रारम्भिक स्तर की कक्षा के पाठ्यपुस्तकों पर आधारित कला समेकित शिक्षा द्वारा सीखने की योजना का निर्माण करें तथा उनका क्रियान्वयन भी करें।
8. सीखने के संसाधन के रूप में शिल्प, हस्तशिल, संग्रहालय ऐतिहासिक इमारते भवन, फिल्म पुस्तकें, उत्सव पर्यटन एवं इन पर रिपोर्ट लेखन व समीक्षा।

इकाई–3

दृश्य कला की अवधारणा एवं उपयोगिता

3.1 दृश्य कला–कला का वह पक्ष या कलात्मक अभिव्यक्ति है जिन्हें हम देख पाते हैं या जिनकी मूर्त अनुभूति होती है। ये दृश्य कला की श्रेणी में आते हैं जैसे –फोटोग्राफ, छपाई, चलचित्र, मूर्तिकला आदि। दृश्य कला द्विविमीय या त्रिविमीय हो सकती है, जैसे चित्र, पेंटिंग, कोलाज आदि द्विविमीय दृश्य कला के उदाहरण हैं। मूर्तिकला, पुतलीकला, काष्ठकला, त्रिविमिय दृश्यकला के उदाहरण हैं। दृश्यकला के आवश्यक तत्व हैं – रेखा, आकृति, स्वरूप, स्थान, बनावट, मूल्य और रंग।

दृश्य कलाओं के माध्यम से प्राप्त अनुभव विद्यार्थियों के मस्तिष्क में स्थायी छाप छोड़ते हैं। महत्वपूर्ण रूप से दृश्य सामग्री विभिन्न अवधारणाओं की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि को व्यावहारिक आधार प्रदान करती है। दृश्य कलाएँ लोक एवं क्षेत्रीय कलाओं के साथ–साथ सांस्कृतिक निरन्तरता को भी प्रोत्साहित करती हैं। दृश्य कलाएं ऐन्द्रिक अनुशासन और नियंत्रण को प्रोत्साहित करती हैं। इसमें आंतरिक भाव सहजता और पूर्णता में अभिव्यक्त होते हैं। दृश्य कला की सबसे बड़ी विशेषता है इससे संबंधित कार्यो का संग्रहण एवं प्रदर्शन । वस्तुतः दृश्य कलाएँ आसानी से संग्रहित और प्रदर्शित की जा सकती हैं, अर्थात –भविष्य में भी उनका प्रयोग सहजता से किया जा सकता है। दृश्य कला के अन्तर्गत किए गए कार्य भविष्य के कार्य के लिए दृष्टि प्रदान करते हैं तथा आधार भी बनते हैं।

3.2 दृश्य कला के विविध प्रकार एवं सामग्री विकास :

दृश्य कला की विभिन्न विधाओं के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार की सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है जैसे – रेखाचित्र के लिए पेन्सिल, चारकोल, स्केचपेन, रंगीन चॉक आदि। पेंटिंग के लिए पेस्टल रंग, स्केच पेन, मोमी रंग, पोस्टर रंग, ब्रश आदि। कोलाज के लिए रंगीन कागज, कपड़े की कतरन, रद्दी सामग्री, गोंद, फेवीकोल आदि। छपाई के लिए सब्जी का टुकड़ा, चाकू, पोस्टर रंग, गोंद आदि। मूर्तिकला में तालाब की मिट्टी, बर्तन बनाने की मिट्टी,

मूर्तिकला के औजार आदि। कला शिक्षा में दृश्य कला का महत्वपूर्ण स्थान है। वैसे तो कला के माध्यम से कल्पना की अभिव्यक्ति होती हैं लेकिन जिस सहजता से कल्पनाओं की सार्थक अभिव्यक्ति दृश्य कला के माध्यम से होती है वह अपने–आप में अद्वितीय है। वास्तव में दृश्य कला कल्पना, सोच, अनुभवों का मूर्त रूप है। दृश्य कला विद्यार्थियों के अशाब्दिक–भावों को सहजता से अभिव्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं, खास कर दृश्य कला में प्रयुक्त सामग्री, दृश्य अभिव्यक्ति को और भी जीवन्त बनाते हैं। दृश्य कलाएँ नए अनुभवों के सृजन और पुराने अनुभवों की निरन्तरता को सुनिश्चत करती है।

3.3 दृश्य कला के निर्माण में सहायक कुछ सामग्री

1 **पेंसिल** : प्रारंभिक स्तर पर बच्चे पेंसिल का ही उपयोग करते हैं। टेढ़ी मेढ़ी लकीरें खींचना चित्र बनाना, अक्षर लिखना आदि कार्य प्रारंभिक स्तर पर पेंसिल से ही किये जाते हैं। रंगीन और ग्रेफाइट पेंसिल का प्रयोग हम अक्सर करते रहते हैं।

i. रंगीन पेंसिल : इसमें मोम के साथ रंगीन पदार्थ मिले होते हैं। ये पेंसिलें एक साथ कई रंगों में उपलब्ध होती है।

ii. ग्रेफाइट पेंसिल : यह पेंसिल का सामान्य एवं प्रचलित रूप हैं। ये ग्रेफाइट एवं क्ले के मिश्रण से बनी होती हैं जो वास्तविक रूप में मुलायम लकड़ी के अंदर बंद रहती हैं। कठोर (**H**) एवं मुलायम (**B**) काली पेंसिल बाजारों में उपलब्ध है।

2. पेस्टल रंग : यह एक प्रभावी कला माध्यम है। ये विशेष प्रकार के रंग द्रव्य होते हैं। पेस्टल सूखे एवं तैलीय दोनों प्रकारों में मिलते हैं।

पेस्टल एक प्रभावी माध्यम है, विशेष कर बच्चों के लिए जिन्हें रंग, ब्रश को नियंत्रण करना नहीं आता। इसमें रंग बरबाद नहीं होता है और बच्चे मनचाहे रंगो का उपयोग अपने द्वारा बनाए गए चित्रों के लिए करते हैं।

इसमें चमकीले रंग बच्चों को आकर्षित करते हैं।

3. **पोस्टर रंग** : पोस्टर रंग चिपचिपा, अपारदर्शी एवं गोंद की तरह तुरंत सूख जाने वाला जल रंग (Water colour) है। बाजार में इनकी उपलब्धता सीसे की छोटे–छोटे जारों में है। ये रंग मूलतः अपारदर्शी होते हैं लेकिन इन्हें जल में घोलकर पारदर्शी भी बनाया जा सकता है। इसका प्रयोग पोस्टर लिखने में, विभिन्न प्रकार के कार्ड, पेपरमेशी आदि पर रंग रोगन हेतु

किया जाता है साथ ही प्राकृतिक दृश्यों, पेंटिग, प्रदर्शन एवं शैक्षिक कार्यों में इसका उपयोग किया जाता है।

4. कलम और स्याही : चित्रांकन में पेंसिल की तरह ही कलम का भी प्रयोग किया जाता है। कलम और स्याही से चित्र की बाह्य रेखा (Outline) आड़ी–तिरछी रेखा खींचना पेंसिल की तरह ही होता है। पेंसिल की अपेक्षा कलम से किया गया कार्य कुछ मुश्किल अवश्य होता है लेकिन परिणाम रोचक होता है।

आजकल बाजार में विभिन्न प्रकार के कलम उपलब्ध हैं, जैसे–नीब पेन, मार्कर (नुकीला), जेलपेन आदि। हम स्वयं भी बांस, सरकंडे और पक्षियों के पंख से कलम बना सकते हैं।

दृश्य कला के अंतर्गत रंगोली बनाना एक प्रचलित व लोकप्रिय कला है। यह देश की पारंपरिक लोककला है। हिन्दू पर्व–त्यौहारों के दौरान इसे घरों के सामने, बरामदे आदि में बनाया जाता है। इसे विभिन्न राज्यों में अलग–अलग नाम से भी जाना जाता है, यथा राजस्थान में मंडाना, प. बंगाल में अल्पना आदि। रंगोली सरल ज्यामितीय आकृति से भी बनायी जाती है।

रंगोली बनाने में प्रयुक्त सामग्री विभिन्न राज्यों में अलग–अलग तरह की होती है।

सामान्यतः रंगोली बनाने के लिए परिवेश में उपलब्ध सामग्रियों का इस्तेमाल किया जाता है। जैसे –लकड़ी का बुरादा, अबीर, गुलाल, बालू, कई रंगो के फूल, पत्थर के छोटे–छोटे टुकड़े, सूखे हुए पत्ते आदि। नई तकनीक एवं आधुनिकता के परिवेश में रंगोली की नई–नई आधुनिक तकनीकें प्रचलित हो रही हैं।

विचार करें: रंगोली और गणित, दोनों ही पैटर्न का अनुकरण करते हैं। फिर क्या रंगोली सिर्फ सजावटी उद्देश्यों तक सीमित है? गणित विषय की विभिन्न अवधारणाओं और कठिन बिन्दुओं को समझने में इसकी क्या उपयोगिता हो सकती हैं? इस पर चर्चा करें।

3.4 चित्रांकन एवं पेंटिंग

चित्रांकन के लिए प्रयोग होने वाली सामग्रियों का इस्तेमाल आवश्यकतानुसार किया जाता है तथा विद्यार्थी अपनी कल्पनाशीलता के अनुसार इनका प्रयोग कर सकता है। चित्रों को बनाते समय बच्चें विभिन्न कौशलों को भी सीखते –समझते तथा उन्हें प्रयोग में लाते हैं। इसके माध्यम से बच्चे आकार, रचनाओं और रंगो में संतुलन रखने का कौशल सीखते हैं। चित्र बनाते समय रंगो तथा रचनाओं की संगति भी सीखते हैं।

रंगो से चित्र में सजीवता उत्पन्न होती है और उसका रूप निखर कर आता है। लाल, पीला और नीला – यह तीनों प्रारंभिक (Primary) रंग हैं। इनको रंगो के मिश्रण से नहीं बनाया जा सकता। बैंगनी, नारंगी, धानी, हरा ब्राउन आदि इन्हीं रंगो के मिश्रण से बनते है। इनको गौण (Secondary) रंग कहा जाता है। सफेद, काला और भूरा(ग्रे) रंग न्यूटल (Neutral) रंग कहलाते हैं।

छपाई कला गोदना : छत्तीसगढ़ की प्रसिद्ध लोक कला गोदना जो प्राचीन समय में आदिवासी मान्यतानुसार शरीर पर उकेरी जाती थी, जिसमें सुई एवं रंगो के माध्यम से शरीर के अंगों पर पशु–पक्षियों के चित्र, मानव श्रृखंला की आकृतियाँ, फूलपत्तियाँ एवं नाम को लिखा जाता था परंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसका स्वरूप बदल गया। अब यह कॉटन, कोसा, टसर, सिल्क जैसे कपड़ो पर प्रिंट किया जाता है। इसे गोदना प्रिंट कहते है। प्रदेश में कुशल कलाकारों द्वारा गोदना प्रिंट की कला निर्माण कार्य किया जा रहा है।

ब. ब्लॉक पेंटिंग : किसी वस्तु को विशेषता प्रदान करने के लिए छपाई एक पसंदीदा विधि रहा है। भारत की प्राचीन कला विधियों में ब्लॉक पेंटिंग एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके लिए कई ऐसे साधारण तकनीक है जिसका उपयोग प्रांरभिक/प्राथमिक स्तर के बच्चों के साथ किया जा सकता है। ब्लॉक पेंटिंग का उपयोग सामान्यतः कपड़ों की छपाई के लिए भी किया जाता है। इसके लिए कई प्रकार के पारंपरिक और नवाचारी वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है।

लकड़ी के ब्लॉक का इस्तेमाल करना अपेक्षाकृत प्राथमिक स्तर के बच्चों के लिए सही न हो अपितु कई अन्य माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है। कई सब्जियों के कटे हुए हिस्सों को रंग में डुबों कर उनका इस्तेमाल ब्लॉक पेंटिंग में किया जाता है। जैसे – भिंडी, आलू, फ्रेंचबीन आदि। आलू को आधा काट कर कटे हिस्से पर कई प्रकार के डिजाईन बनाकर ब्लॉक की तरह प्रयोग किया जाता है। इनके माध्यम से कई प्रकार के पैटर्न भी बनाये जा सकते हैं। परन्तु यहाँ यह तार्किक है कि खाने–पीने की वस्तुओं का इस्तेमाल इन माध्यमों में करने से सब्जियों बरबाद हो जाती हैं। अतः इस प्रकार के ब्लॉक का इस्तेमाल किया जाना उचित नहीं कहा जा सकता।

प्राकृतिक छपाई : कई ऐसे प्राकृतिक वस्तुएं हैं जिनका प्रयोग ब्लॉक पेंटिंग में किया जाता है जैसे–विभिन्न प्रकार की पत्तियों, पंख, कागज के मुड़े हुए टुकड़े, धागा का गोला, पेंसिल का सीरा आदि। वस्तुओं को कई प्रकार के रंगों में डुबोकर कागज और कपड़ों पर दबाया जाता है, फलतः कई प्रकार की कलात्मक आकृतियाँ उभर जाती हैं। बच्चें इस प्रकार की गतिविधियों में अत्यधिक रूचि लेते हैं। प्रारंभिक कक्षा के बच्चों को इस माध्यम से कई कलात्मक चित्रों

एवं पैटर्न का निर्माण कराया जा सकता है साथ ही इन्हें शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में समावेशित भी किया जा सकता है।

हाथ/उंगली/अंगुठे से छपाई :— दरअसल यह एक प्रकार का ब्लॉक पेन्टिग है इसमें हाथ, उंगली और अगुंठों का प्रयोग ब्लॉक के रूप में किया जाता है। इनके उपयोग से सुन्दर चित्र एवं पैटर्न बनाये जा सकते हैं, आवश्यकता कल्पनशीलता की है। बच्चे कल्पना की दुनिया में अनायास ही विचरण करते हैं, फलतः वे इस प्रकार के ब्लॉक पेंटिंग की विधा से अपनी कल्पना को कोरे कागज और कपड़ों पर उकेरते रहते हैं। आपने सरकारी कागजों पर कुछ लोगों को अंगुठों का निशान लगाते देखा होगा। क्या यह भी एक प्रकार का ब्लॉक पेंटिंग है?

> हाथ, उंगलियों, अगूठें आदि से छपाई छोटे बच्चों में काफी लोकप्रिय है। प्राथमिक कक्षाओं में इस तरह की छपाई बच्चों से कराई जा सकती है। इनका उपयोग कविता, कहानी के सृजन के अवसर, गणितीय संक्रियाओं की समझ, पर्यावरण के विभिन्न घटकों को समझने में किया जा सकता है।

नववधु के पद चिह्न को अंकित करने की परंपरा भी भारत के कई क्षेत्रों में पाई जाती है। इनकी कलात्मकता भी ब्लॉक पेंटिंग की याद दिलाती है।

3.5 कोलाज बनाना

कोलाज फ्रेंच शब्द है जिसका अर्थ है — चिपकाना। कला के रूपों में विभिन्न चीजों जैसे : कागज, कपड़ा आदि को व्यवस्थित और क्रमिक रूप से कागज पर चिपकाना। कोलाज बनाने का आधार कागज, बोर्ड, प्लाई और कैनवास होता है। इसमें कलात्मक कार्य करने के लिए विभिन्न प्रकार के पदार्थो का उपयोग कल्पनाशीलता के आधार पर करते हैं जैसे— समाचार पत्र, रंगीन कागज, पुराने कपड़े, बटन, धागा, डब्बे, धातु (पत्तर) आदि। बच्चें अपनी कल्पनाशीलता से कोलाज के अंतर्गत त्रिआयामी आकृतियों का निर्माण भी कर सकते हैं। अण्डे के छिल्के, डिस्पोजल ग्लास, रैपर, पुआल छोटी—छोटी लकड़ियाँ, शीशी, बोतल, फ्यूज बल्ब, पुराने बर्तन, फटे—पुराने कपड़े, रद्दी कागज आदि से कोलाज बनाया जा सकता है। कोलाज के निर्माण में बच्चों की रूचि ज्यादा बढ़ जाती है, क्योंकि इसमें चित्रांकन के लिए रेखाओं को व्यवस्थित करने जैसे कोई कठिन कार्य नहीं करना पड़ता है। बच्चें इसमें अपनी कल्पना शीलता से विषयगत कई कार्य भी कर सकते हैं। जैसे प्रदूषण, स्वच्छता आदि पर कोलाज बना सकते हैं।

3.6 मुखौटा बनाना

मुखौटा बचपन से ही बच्चों के मनोरंजन का एक सर्वश्रेष्ठ साधन है। भारत में मुखौटों का प्राचीनतम प्रयोग भीमबेटका के भील चित्रों में दिखाई देता है जहाँ मुखौटा पहने

मानवाकृतियाँ चित्रित है। बच्चें उन्हें पहनकर आनन्दित होते हैं। मुखौटा में अतीत और वर्तमान का एक समन्वय है। जो भविष्य को भी अपनी कड़ियों में जोड़ लेता है। मेलों में अधिकतर पशु–पक्षी, राक्षस या किसी भी देवी–देवता के मुखौटों का क्रय–विक्रय होता है।

मुखौटों के माध्यम से शिक्षा प्रणाली की कठिन पद्धति को भी रोचक एवं सरल बनाया जा सकता है। शिक्षण में मुखौटों का प्रयोग बच्चों में नई रूचि जगाता है। बच्चों को इनके माध्यम से नैतिक शिक्षा भी दी जा सकती है। उदाहरण के लिए विष्णु शर्मा द्वारा रचित'' पंचतंत्र'' की कहानियों में विभिन्न पात्रों हेतु मुखौटों का प्रयोग कर कहानियों का मंचन किया जा सकता है। इससे बच्चों में सहयोग, सच्चाई, साहस, बुद्धिचातुर्य इत्यादि गुणों का विकास किया जा सकता है क्योंकि इसकी हर कहानी के अंत में एक सीख है, जो जीवन को प्रभावी बनाती है। मुखौटा किसी भी विषय में पढ़ाये जाने वाले पाठ को सुरूचिपूर्ण बना सकता है। इसको बनाने में साधारण उपकरण तथा कम खर्चीली सामग्रियों का प्रयोग किया जा सकता है। यह किसी भी आयु वर्ग के बच्चों के साथ में बनाया जा सकता है तथा मुखौटें को बनाने में मजा भी आता है।

मुखौटा बनाना व उससे सीखने की पद्धति में बच्चें की मानसिक संतुलन और एकाग्रता बढ़ती है । मुखौटा बनाते समय बच्चें के मस्तिष्क के साथ–साथ उसके शरीर के अन्य अंग भी सम्मिलित होते हैं तथा बच्चा स्वयं निर्णय भी लेता है उसको मुखौटा किस प्रकार बनाना है, मुखौटा किस माध्यम के द्वारा बनाया जायेगा, उसमें कौन सा रंग किया जायेगा तथा किस विधि द्वारा बनाया जायेगा, इस प्रकार इन प्रश्नों को लेकर और उत्तरों को ढूंढकर अपना मस्तिष्क और हाथों के समन्वय द्वारा मुखौटों की रचना करता है।

शिक्षक को मुखौटा बनाने की पूरी जानकारी होनी चाहिए कि वह किस प्रकार के माध्यमों का प्रयोग कर मुखौटों का निर्माण करवा सकता है। इसके लिए शिक्षक अपने काम की पद्धति तथा माध्यम का स्वयं चुनाव कर सकता है। साधन अथवा माध्यम का चुनाव बच्चें के आयु वर्ग एवं रूचि पर निर्भर करता हैं

मुखौटें बनाने में कागज, गत्ता, पेपर मेशी, प्लास्टर ऑफ पेरिस व मिट्टी आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

3.7 कागज के मुखौटें बनाना

कक्षा 1–5 तक (प्राथमिक स्तर) आयु वर्ष 6–11 वर्ष

पूर्व तैयारी : कागज के मुखौटे बनाने के पूर्व शिक्षक विभिन्न प्रकार की सामग्री के विषय में बच्चों को जानकारी दें। बच्चों को सृजनात्मक मुखौटा बनाने के लिए प्रेरित करें। विशेष प्रकार

के मुखौटों को बनवाने के लिए विभिन्न प्रकार के स्त्रोतों से जानकारी एवं सामग्री इकट्ठा कर कक्षा में जाएं।

सामग्री : सादे कागज जैसे ड्रॉइंग शीट, चार्ट पेपर आदि रंगीन कागज जैसे ग्लेज़ पेपर, पोस्टर पेपर आदि, रंगीन कागज–A4 आकार या अन्य किसी आकार के, कैंची, चिपकाने वाला पदार्थ।

विधि : A4 आकार के कागज को आधे में मोड़े। ये मोड़ क्षैतिज या खड़ा कुछ भी हो सकता है, इसका निर्णय मुखौटे में बनने वाले चरित्र पर निर्भर करता है। अगर हमारे चरित्र का मुख लम्बा है तो कागज को खड़े में मोड़ा जाएगा। यदि चरित्र का मुख चौड़ा है तो कागज को क्षैतिज में मोड़ा जाना चाहिए।

मोड़े गए कागज में चरित्र के अनुसार बाह्य रेखा बनाएं तथा इस बात का ध्यान रखे कि यह रेखा कागज के अधिकांश भाग का प्रयोग करते हुए बनाई जाए।

मुखौटे में सबसे महत्वपूर्ण स्थान उसकी ऑखे होती हैं इसलिए ऑखों के स्थान का निर्धारण भी भली प्रकार से कर लेना चाहिए।

मुखौटे की नाक चरित्र पर निर्भर करती है जैसे मनुष्य की नाक को ऑखो के मध्य से शुरू करके बनाया जाएगा। यदि उभरी हुई नाक चाहिए तो अन्य कागज के टुकड़े से नाक बनाकर चिपकाई जा सकती है।

विभिन्न प्रकार के मुखौटों में विभिन्न भावों को सम्मिलित करने के लिए चित्रकारी की जा सकती है। मुखौटें में उसकी विशेषताओं को ध्यान में रखकर उसमें रंग भरे जा सकते हैं। मुखौटें को त्रिआयामी स्वरूप भी दिया जा सकता है।

बच्चें पक्षियों के पंख, उन के बाल, लकड़ी की छीलन इत्यादि से मुखौटे के बालों का निर्माण कर सकते हैं अथवा सजावट भी कर सकते है। मुखौटों को मुख पर बांधने के लिए दोनों किनारों पर छेद कर उसमें डोरी, रीबन इत्यादि बांध दे या कागज अथवा अखबार की पट्टी को मुखौटे पर लगाकर भी मुख पर लगाया जा सकता है।

यहाँ पर मुखौटें बनाने की एक विधि का वर्णन किया गया है आप अन्य तरीकों एवं विविध सामाग्री का उपयोग कर कलात्मक मुखौटे बना सकते हैं।

सावधानियाँ : बच्चों के लिए या बच्चों से मुखौटे बनवाते समय स्टेपलर का प्रयोग न करें। बच्चों द्वारा के साथ काम करते हुए इस बात का ध्यान रखें कि धारदार चाकू या कैंची से वे अपने को चोटिल न कर लें क्योंकि बच्चों की सहज प्रवृत्ति होती कि वे किसी भी चीज को मुँह में डाल लेते हैं।

गतिविधि :–

विद्यालय के वार्षिक खेल प्रतियोगिताओं, वार्षिक उत्सवों, त्यौहारों इत्यादि के समय अनेक प्रकार के पशु–पक्षियों तथा अन्य प्रकार के मुखौटों का उपयोग कर गतिविधियां कराई जा सकती हैं। आप अपने विद्यालय में अलग–अलग प्रकार के मुखौटें विद्यार्थियों के साथ बनाएं एवं उसकी प्रदर्शनी विद्यालय में लगाएं ।

3.8 पुतली बनाना (**Puppet Making**)

पुतलीकला प्रदर्शन कला का एक सशक्त स्वरूप है। पुतलियां विभिन्न प्रकार की होती हैं। जो उनके बनावट की सामग्री और इस्तेमाल करने की विधियों पर निर्भर करती हैं। पुतली के माध्यम से किसी भी संदेश को प्रभावी रूप में संप्रेषित किया जा सकता है।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में पुतली का समावेश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी, रोचक एवं आनंददायी बनाता है। आवश्यकता है तो बस पुतलियों के निर्माण और संचालन के समझ की।

पुतली के निर्माण में साधारण वस्तुओं का इस्तेमाल होता है जो परिवेश में बहुतायात पायी जाती हैं। जैसे –धागा, कागज के बेकार टुकड़े, कागज का थैला, समाचार पत्र, बटन, बेकार ऊन, पुराने कपड़े, मोजा, रूई, गोंद, फेविकॉल आदि। सामान्यतः पुतलियाँ (puppet) निम्न प्रकार की होती हैं।

अ. दस्ताना पुतली (Gloves puppet)

ब. छड़ पुतली (Rod puppet)

स. धागा पुतली (string puppet)

स. छाया पुतली (shadow puppet)

उपर्युक्त पारंपरिक पुतलियों के साथ–साथ कुछ ऐसी पुतलियाँ भी होती हैं जिन्हें कक्षा में या शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के तहत बच्चों के द्वारा बनाया जा सकता है। इनमें से कुछ का विवरण प्रस्तुत है :–

अ. उंगली पुतली (Finger puppet) : पुतली कला का यह एक अत्यंत साधारण तरीका है। इसे बिना किसी विशेष औपचारिकता के उंगली पर चरित्र के निर्माण के लिए आँख, मुख आदि मुखाकृतियों को कागज, कपड़े में अंकित किया जाता है और उंगली में पहन लिया जाता है। इस तरह की पुललियां आसानी से और जल्दी तैयार की जा सकती है।

ब. मोजा पुतली (Socks Puppet) : नाम के अनुरूप इस प्रकार की पुतलियाँ मोजे (Socks) से बनाई जाती हैं। मोजे में आवश्यकतानुसार, मुँह, ऑख, बाल आदि विशेष अंग प्रदर्शित किये जाते हैं। विशेष कर मुंह को संचालन योग्य बनाया जाता है। मोजा पुतली में

मुख्य संचालक अंग मुख होता है इसलिए इसे MUPPET भी कहा जाता है। चरित्र के अनुसार इनमें विशेषताओं को प्रदर्शित किया जाता है जैसे–पुरूष, स्त्री, बालक, बालिका, पशु, पक्षी आदि। शिक्षक आवश्यकतानुसार अपना–अपना मोजा पुतली तैयार कर सकते हैं तथा बच्चों से भी इसका निर्माण करवा सकते हैं। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इस प्रकार पुतली का प्रयोग अत्यंत प्रभावी होता है जो बच्चों को सीखने का आनंददायी वातावरण प्रदान करता है। समावेशी शिक्षा का यह एक अत्यंत प्रभावी एवं सशक्त माध्यम है। आवश्यकता यह है कि इसका इस्तेमाल कक्षा शिक्षण में होशियारी से किया जाए।

इसी तरह दस्ताना पुतली (Glove Puppet) एवं अन्य पुतलियां तैयार की जा सकती है।

गतिविधिः

प्रारम्भिक स्तर की कक्षा के विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर पुतली कला के प्रदर्शन हेतु एक संवाद लिखें। अध्ययन केन्द्र और वर्गकक्ष में इसका प्रदर्शन करें। विद्यार्थियों के द्वारा भी इसका प्रदर्शन हो सुनिश्चित करें।

3.9 मिट्टी/पेपर मेशी एवं क्ले से आकृतियाँ बनाना (**Clay modelling**)

आपने बच्चों को गीली मिट्टी से विभिन्न प्रकार की आकृतियां बनाते हुए देखा होगा। बच्चे चाहे किसी उम्र के हो, गीली मिट्टी से खेलना पसंद करते हैं। बच्चे अपने आस–पास की वस्तुओं को बड़े ही ध्यान से देखते हैं और विभिन्न वस्तुओं की विशेषताओं को पहचानने की कोशिश करते हैं। मिट्टी से विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षियां की आकृति बनाते हुए वे उनके आकार–प्रकार मुखाकृति आदि का ध्यान तो रखते ही हैं कभी–कभी इनके बारीक अन्तर की भी पहचान कर लेते हैं। दरअसल बच्चों की यह आरंभिक प्रवृत्ति शिल्पकला को बढ़ावा देती है। इससे बच्चों में विभिन्न प्रकार के आकर्षक एवं पारंपरिक शिल्प के गढ़ने की क्षमता का विकास होता है। विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ बनाने के लिए गीली मिट्टी के अलावा अन्य माध्यम भी है, जैसे पेपर मैसी, क्ले आदि।

इन माध्यमों से बच्चों को विभिन्न शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सलंग्न किया जा सकता है, जिससे उनमें कला के साथ–साथ संबंधित विषयों की पर्याप्त समझ विकसित हो सकेगी। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि कला समावेशी शिक्षण में कला के इस माध्यम का अत्यंत प्रभावी स्थान है। इस प्रकार की गतिविधियों के दौरान बच्चे की सभी ज्ञानेंद्रियां क्रियाशील रहती है फलतः शिक्षण अधिगम प्रकिया प्रभावी और रूचिकर होती है।

3.10 पेपर मैशी –

पेपर मैशी बनाने के लिए पहले पेपर मैशी या लुगदी बनाई जाती है। इसके लिए अखबार के छोटे–छोटे टुकड़े कर उनको चार–पांच दिन पानी में भिगोया जाता है। दो दिन में इसका पानी बदलना है वरना इससे बदबू आने लगती है। तत्पश्चात् इस भीगे हुए कागज को बारीक कूटा जाता है। फिर इसमें गोंद डालकर रख दिया जाता है। नमी के कारण गोंद गल जाती है। तब इसमें खड़िया मिट्टी मिलाकर मिश्रण को मल कर गीले आटे जैसा तैयार किया जाता है। इसे ही पेपर मैशी कहते हैं। इससे विभिन्न आकृतियां बनाई जाती हैं। इन आकृतियों पर चित्रांकन कर आकर्षक स्वरूप दिया जाता है। पेपर मैशी के सभी खिलौनों को हाथ से बनाया जाता है।

इसके अलावा कागज को विभिन्न डिजाईनों में काटकर झण्डे, पताका, तोरण आदि बनाए जा सकते हैं। बच्चे बड़ी ही आसानी से कागज से नाव, हवाई जहाज, गुड़िया, पुतली, विभिन्न प्रकार के फूल आदि बनाते हैं। कागज से विभिन्न कलाकृतियां बनाना एक कला है जिसे औरीगेमी कहते हैं। यह जापानी शब्द 'ओरी' यानी मोड़ना और 'गेमी' यानी कागज़ से मिलकर बना है। पूरे शब्द का मतलब है–''कागज़ को मोड़ना''। कागज के मोड़ से अनेक रोचक, सरल व जटिल आकृतियां बनाई जा सकती हैं। इस कला में जो कुछ भी करना है कागज़ को मोड़कर ही करना है। मतलब यह की कागज़ को काटना या चिपकाना नहीं है। ओरोगेमी का अपना एक आंतरिक अनुशासन है। इस अनुशासन के आधार पर आप विभिन्न आकृतियां बना सकते हैं। आप ओरोगेमी के अंतर्गत कुछ आकृतियां बनाना सीखकर गणित के सिद्धांत आसानी से बता सकते हैं।

इसके साथ ही साथ बच्चों से अखबारों व अनुपयोगी कागज़ों से टोपी, मुखौटें, फोल्डर इत्यादि बनवाये जा सकते हैं। जिसे ''कबाड़ से जुगाड़'' के नाम से भी जाना जाता है।

गतिविधि :

शिक्षक यह गतिविधि को कक्षा में या कक्षा के बाहर करवा सकते है।

- बच्चों को समूह में पूर्व से बनाये गये गीली मिट्टी/क्ले या पेपर मैशी दें।
- प्रत्येक समूह को अपने कल्पना से विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ बनाने का निर्देश दें।
- समूहों को आवश्यतानुसार रंगों से आकृतियों को सजाने को कहें।
- अन्त में इनकी प्रदर्शनी लगवायें।

कागज के शिल्प के अन्तर्गत शिक्षण प्रक्रिया के अन्त में बच्चों की निम्नांकित दक्षताओं को विकसित होने का मौका मिलता है

- हाथ के कौशलों को बढ़ावा मिलता है।
- अन्य विषय विशेषकर गणित के सिद्धांतों को समझने में सहायता मिलती है।
- कल्पनाशीलता को बढ़ावा मिलता है।

यह भी करें

1. विद्यार्थियों से कहें पेस्टल रंग, ऑयल रंग और जल रंग का प्रयोग करते हुए कलाकृतियाँ बनाने को कहें और उनके द्वारा बनाई गई कलाकृतियों की प्रदर्शनी आयोजित करें।
2. पुतली कैसे बनाई जाए, इसके लिए एक विशेषज्ञ को बुलाकर अपने अध्ययन केन्द्र पर कार्यशाला का आयोजन करें और पाठ्यपुस्तकों की कहानियों से संबंधित पुतलियों का निर्माण करें।
3. विद्यार्थी पेपर मेशी बनाने और उससे विभिन्न आकृतियों के निर्माण करना सीखें तथा अपने विद्यालय के अन्य विद्यार्थियों को सिखाएं।
4.अपने आस पास के कुछ लोक कलाओं व शिल्पों का अवलोकन करें तथा उनमें किस–किस प्रकार की सामग्री का उपयोग होता है, उनकी सूची बनाएं एवं मनपसंद लोककला सीखें।
5.अपने डी.एल.एड. कार्यक्रम के दौरान नोट्स को व्यवस्थित रखने के लिए कुछ उपयोगी फोल्डरों का निर्माण करें।

इकाई–4

प्रदर्शनकारी कलाएँ

4.1 प्रदर्शनकारी कलाएँ वे कलाएँ है जिन्हें शारीरिक अंग संचालन, गायन, वादन और नृत्य द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। गीत–संगीत, लोक नाट्य, नाटक प्रदर्शकारी कलाओं के अभिन्न अंग है।

4.2 संगीत–संगीत और जीवन आपस में इस प्रकार जुड़े हैं कि एक के बिना दूसरे की कल्पना करना असंभव प्रतीत होता है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त संगीत मानव–जीवन के साथ विद्यमान रहता है। संगीत मनुष्य को तनावमुक्त करके संतुलित व्यवहार की ओर प्रेरित करता है। इससे मानव सांसारिक परेशानियों से दूर होकर शांति व आनंद का अनुभव करता है। साथ ही परमशक्ति के प्रति अपनी आस्था स्वर, लय, ताल के माध्यम से प्रकट करता है। स्वर आत्मा का नाद है। संगीत व आत्मा का घनिष्ठ संबंध है।

प्राथमिक कक्षाओं तक अधिक निर्देश देने या नियम बताने से उनकी अभिव्यक्ति कुंठित होगी न कि बढ़ेगी। बच्चों को अपने क्षेत्र के कलाकारों, प्रदर्शनियों, ऐतिहासिक इमारतों, मेले आदि में ले जाना चाहिए जिससे वे उनके सामाजिक जीवन एवं विरासत से परिचित हो सकें। ये गतिविधियाँ उनके पाठ्यक्रम का ही एक हिस्सा होनी चाहिए। विद्यालय के वार्षिक सत्र में शिक्षकों और विद्यार्थियों को मिल कर कार्यक्रम करना चाहिए।

राष्ट्रीय गान एवं गीत, छोटी, साधारण, कविताएँ (मातृ भाषा में) बच्चों को सामूहिक रूप से अभिनय के साथ सिखाई जा सकती हैं। देशभक्ति गीत, क्षेत्रीय भाषा के गीत जो पर्व–त्योहारों में पारंपरिक रूप से प्रचलित हों, सामुदायिक गायन इत्यादि उन्हें सिखाए जा सकते हैं। विद्यार्थियों को आधार, ताल, लय एवं सुर का ज्ञान भी कराया जा सकता है। स्वयं के शरीर के विभिन्न अंगों से लेकर आस–पास पाई जाने वाली वस्तुओं जैसे बर्तन, धागे, पत्ते, ड्रम आदि से निकलने वाली ध्वनियों के साथ भी वे प्रयोग कर सकते हैं।

विषय वस्तु को उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों में संगीत के दोनों रूपों, गायन तथा वादन के प्रति संवेदनशीलता को विकसित करने के योग्य होना चाहिए। शुद्ध एवं विकृत स्वरों की गहरी समझ एवं ज्ञान तथा कुछ अलंकारों को गाने की योग्यता सिखाई जानी चाहिए। राग आधारित संयोजना को बच्चों को सिखाना चाहिए। सामुदायिक गायन, लोक गायन, देश भक्ति के गीत एवं भजन भी सिखाए जा सकते हैं। बच्चे अपने घर के सदस्यों से पारंपरिक गायन अथवा वादन सीख सकते हैं और उन्हें कक्षा या विद्यालय में किसी अवसर पर प्रस्तुत करने के लिए

उत्साहित किया जाना चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी को अपने प्रदर्शन में सुधार और विभिन्न गतिविधियों में भाग लेने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए, जैसे सामूहिक गायन, वादन (ऑरकेस्ट्रा), युगल गीत अथवा समूह गीत इत्यादि। इसे विद्यार्थियों द्वारा विकसित भी किया जाना चाहिए।

गतिविधि–

- शिक्षक / विद्यार्थियों द्वारा कोई भी गीत स्वर एवं लय में गाकर सुनाना।
- छात्र / छात्राओं द्वारा बाल गीत, प्रार्थना को गाकर सुनाना।
- बच्चों को अपनी पसंद का कोई एक गीत गाने को कहें।
- गीत को सुनकर समीक्षा करना एवं करवाना।

4.3 नाटक

नाटक एक सृजनात्मक गतिविधि है। इसके माध्यम से व्यक्ति अपने विचारों को प्रकट कर सकता है और नाटक की विभिन्न परिस्थितियों का मूल्यांकन कर सकता है। शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों में नाटक को एक सीखने की विधा, समाजीकरण की प्रक्रिया और कला के एक रूप में देखा जाता है। जैसे–जैसे बच्चे शिक्षा के अगले चरणों की ओर अग्रसर होते हैं, विशेषकर माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तरों की ओर, नाटक प्रदर्शन कला की एक संगठित गतिविधि का स्वरूप ले लेता है जहाँ सामूहिक रूप से विद्यार्थी एक लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। नाटक के माध्यम से बच्चों को मनोवैज्ञानिक रूप से मुक्त अभिव्यक्ति एवं कल्पना का अवसर प्राप्त होता है। इस प्रक्रिया की परिणति एक नाटक के रूपांतरण एवं आमंत्रित श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुतीकरण से होती है। नाटक बहुत छोटी उम्र से बच्चों की जिंदगी का हिस्सा होता है। बच्चे तीन या चार साल के उम्र से दृश्यों और कहानियों का अभिनय करने लगते हैं। वे बड़ों की नकल करते हुए उनकी भूमिकाओं का अभिनय भी करते हैं। विभिन्न पशु–पक्षियों, जानवरों की आवाज़ों की नकल भी आसानी से कर लेते हैं।

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर नाटक सीखने के उद्देश्य आधुनिक शिक्षा के उद्देश्यों के समान हैं, जैसे मौलिकता / सृजनात्मकता एवं सौदर्यबोध का विकास, आलोचनात्मक विचारधारा, सामाजिक विकास, सहकारिता, संचार, दक्षता, मूल्यों का विकास और सर्वोपरि स्वयं का ज्ञान होना। बच्चे उन्मुक्त वातावरण में प्रसन्न होकर विभिन्न अनुभवों के आधार पर ज्ञान का निर्माण करते हैं।

नाटक सीखने के मुख्य उद्देश्य ये है :–

- संगठन की चेतना, अवलोकन करने की क्षमता और बच्चों में एकाग्रचित्त होने को बढ़ावा देना।
- कल्पना शक्ति को एवं आत्म–अन्वेषण को बढ़ावा देना।
- बच्चों को स्वयं के विचार बनाने एवं ज्ञान के संगठन में सहायता देना।
- उनमें मानव संबंधों एवं उनके संघर्ष को समझने की योग्यता का विकास करना।
- विद्यालय में शांति एवं सौजन्य का वातावरण बनाए रखने के लिए नाटकों का प्रयोग करना।

इनकी विषयवस्तु इस प्रकार हो सकती है–

- श्वांस क्रियाएं तथा शरीर की भौतिक गतिविधियाँ (संगीत के साथ और बिना संगीत के)
- अवलोकन, ध्यान, विश्वास, जिम्मेवारी, कल्पना, शब्दों एवं भाषा पर आधारित विभिन्न प्रकार के नाट्य खेल।
- अभिनय के साथ जोर–जोर से कविता एवं कहानी पढ़ना।
- वृत्तांत एवं कथा वाचन।
- विभिन्न प्रकार की ध्वनियों, लय, तालियों एवं आस–पास उपलब्ध अन्य पदार्थों से मनुष्य द्वारा निकाली गई ध्वनियों के ऊँचे–नीचे स्वरों को पहचानना।
- मूक अभिनय एवं स्वाँग ।
- लघु नाटिकाएँ ।
- अपने नगर अथवा आस–पास होने वाले मंचन को देखना, उसकी सराहना एवं मूल्यांकन करना।

नाटक को शिक्षण में सम्मिलित करने के लिए बच्चों को अपने क्षेत्र की लोक नाट्य परंपराओं के बारे में जानने के लिए प्रेरित करना चाहिए। रामलीला, रासलीला एवं अन्य उत्सवों के मंचन को देखने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए जिसकी वे कक्षा में आकर अन्य विद्यार्थियों से चर्चा करें।

नाट्य कला में व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों ही प्रकार के कार्य होते हैं। अतः इसकी अध्ययन प्रणाली कार्यशाला के रूप में फायदेमंद होगी जिससे कक्षा का प्रत्येक विद्यार्थी उसकी

हर गतिविधि में भाग ले सके। यहाँ शिक्षक की भूमिका एक मध्यस्थ एवं उत्साहवर्धक व्यक्ति की होती है। बच्चों को विभिन्न प्रकार के स्वतंत्र कार्य दिए जाने चाहिए जिन्हें वे व्यक्तिगत और सामूहिक तौर पर ले सकें।

कक्षाओं में नाटक का उपयोग

देश के प्रत्येक भाग में त्यौहारों में, मानसून आने पर, फसल कटने पर, नृत्य, गीत, संगीत व नाटक आयोजित करने का प्रचलन है। हरेक क्षेत्र की अपनी शैली और रूप होते हैं। जैसे कि सामान्यतः धार्मिक उत्सवों पर, तीज त्यौहारों पर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए लोकगीतों का सहारा लिया जाता हैं। कहने का आशय हमारा सामाजिक जीवन लोक कलाओं से ओत–प्रोत हैं।

सामाजिक रीतियाँ–कुरातियाँ, सांस्कृतिक क्रियायें, सामाजिक संबंध, व्यावसायिक एवं व्यावहारिक समस्याओं को नुक्कड़ नाटक, एकल नाट्क, लोकनाट्य, रोल प्ले के द्वारा प्रदर्शित कर इनके प्रति जन–जीवन में चेतना जागृत की जाती है। इन सभी विधाओं का उपयोग कक्षा शिक्षण में किया जा सकता है। इससे बच्चों में सृजनशीलता का विकास होता है। शारीरिक और मानसिक अवरोधों को कम या समाप्त करते हुए प्रदर्शन कला रचनात्मकता को बढ़ाती है तथा गलती करने की संभावित डर को दूर करती है। जिससे बच्चों का आत्मविश्वास बढ़ता है।

प्रदर्शन कला में बच्चे सामान्यतः समूहों में कार्य करते हैं। इससे समूह भावना, अनुशासन व नेतृत्व जैसे जीवन–कौशलों का विकास होता हैं समूह में कार्य करने से समन्वयन, भाईचारा, लगाव की भावना का विकास होता है। इस कला में हमें जीवन की विभिन्न कठिनाईयों व परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है जिससे सृजनात्मक सोच एवं व्यवहार का विकास होता है। संवाद बोलने से पहले व उसके बाद तथा संवाद बोलते व सुनते समय अनुशासन, कुशल वक्ता व श्रोता के गुणों का विकास होता है। प्रदर्शन के पश्चात् कलात्मक व सृजनात्मक संतुष्टि का अनुभव होता है जो हमारे व्यक्तित्व को निखारने में अहम भूमिका निभाता है। अतः प्रदर्शन कला का उपयोग शिक्षक/शिक्षिका अपनी कक्षाओं के शिक्षार्थियों का व्यक्तित्व निखारने में कर सकते है क्योंकि इससे :

- विद्यार्थियों को खुशी, एकाग्रता, संतुष्टि, शांति व आनन्द का अनुभव होता है।
- विद्यार्थियों में 'अनेकता में एकता' एवं समूह भावना का विकास होता है।
- विद्यार्थियों के थके व सुस्त मस्तिष्क को स्फूर्ति प्राप्त होती है।

कला–गतिविधियाँ विभिन्न परिवेशों एवं आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों को आपसी संपर्क, पारस्परिक संप्रेषण देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विशिष्ट आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों को विभिन्न गतिविधियों में बराबरी का भाग देने–लेने से उनके व्यक्तित्व में भी निखार आता है एवं उनकी शक्तियों व मनोबल में वृद्धि होती है। इससे उनका चिंतन भी सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रदर्शन कला कक्षा शिक्षण को प्रभावी व बाल केन्द्रित बनाने में सहायक है।

नाटक के अंतर्गत आमतौर पर मंचीय नाटक, नुक्कड़ नाटक, एकांकी, मूकाभिनय, एकल अभिनय एवं इंप्रोवाज़ेशन कराए जा सकते हैं।

इंप्रोवाइज़ेशन के अंतर्गत बच्चों को समूह में बैठाकर कुछ अभ्यास करवाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए उन्हें कुछ विषय दें और उस विषय(टॉपिक) पर पूरा वृत्तांत सुने।

विषय इस प्रकार हो सकते हैं –

- क्या हुआ जब तुम कक्षा में प्रथम आए।
- क्या होगा जब एक दिन नल बंद हो जाए और आपके घर में पानी न मिलें।
- क्या होगा जब एक दिन मुख्यमंत्री जी आपको फोन करके अपने साथ खाने पर आमंत्रित करें।
- क्या होगा यदि एक दिन आपने स्कूल बंक किया पर आपके घर वालों को पता चल गया।

4.4 कक्षा में नाट्य कला का इस्तेमाल करने के लिये व्यावहारिक सुझाव–

सही गतिविधि चुनें – जब किसी नाटक संबंधी गतिविधि की योजना बनाते हैं तो लक्ष्य पता होना चाहिये। कुछ गतिविधियां सटीकता और प्रवाह पैदा करने वाले कामों के लिये हो सकती हैं और कुछ भाषायी कौशल का अभ्यास के लिये। अतः पाठों के उद्देश्यों के अनुसार नाटक का चुनाव करें।

छोटे से शुरूआत करे–. छोटे–छोटे चरणों के साथ अपनी कक्षा में नाटक से बच्चों का परिचय करवाएं । सरल गतिविधियों से शुरूआत करें जैसे बंदर की नकल करो, दादा जी कैसे चलते हैं बताओ, जैसे–जैसे बच्चों का आत्मविश्वास बढ़े वैसे–वैसे कम नियंत्रित गतिविधियों की ओर बढ़े। बच्चों को अक्सर आभास ही नहीं होता कि वे चीज़ों को अलग–अलग ढंग से कह सकते हैं । उन्हें शब्दों या वाक्यों को जोर से, धीमे क्रोध में या दुखी स्वर में बोलने के लिए कहना भी एक अच्छी गतिविधि हो सकती है।

कक्षा को व्यवस्थित करें– कक्षा को इस प्रकार व्यवस्थित करें जिससे सभी बच्चें नाटक में भाग ले सकें या फिर देख सकें। जो बच्चें नाटक देख रहे हैं उनसे सरल शब्दों में नाटक की समीक्षा करायें।

प्रतिक्रिया(फीडबैक)दें– बच्चों ने जो कुछ भी किया जैसे– प्रस्तुतीकरण किया, एक–दूसरें का सहयोग किया, उन्होंने कैसे निर्णय लिये इन सबका विश्लेषण करते हुए अपनी टिप्पणी दें।

जब बच्चे अपना काम खत्म कर दे तभी आप अपनी टिप्पणी दें बीच में प्रतिक्रिया न दें। आपकी रचनात्मक प्रतिक्रिया नाटक संबंधी गतिविधियों का नियमित हिस्सा है। आपकी टिप्पणियों से बच्चे धीरे–धीरे नाटकीकरण की अपनी क्षमताओं और अपनी भाषा में सुधार कर लेंगे।

गतिविधिः

बच्चों को समूह बनाकर विभिन्न विषयों पर नाटक की विभिन्न विधाओं का प्रयोग कर प्रस्तुतीकरण करने को कहें एवं निम्नलिखित बिंदुओं पर आप अवलोकन करे–

–गतिविधि में बच्चें की भागीदारी किस प्रकार की थी।
–बच्चें ने गतिविधि के दौरान किस प्रकार के प्रश्न किए।
– बच्चें अपने पूर्व ज्ञान का उपयोग किस प्रकार कर रहे थें।
–बच्चों ने सामने आई चुनौतियों का सामना किस प्रकार किया।
–गतिविधियां करते समय बच्चें क्या–क्या सीख रहे थें।
–बच्चों को सीखने में क्या–क्या कठिनाईयां आ रहीं थी।
–इन कठिनाईयों को दूर करने की शिक्षण योजना बनाएं।

4.6 कला एवं कला शिक्षा में मूल्यांकन – कला शिक्षा में गैर प्रतियोगी और गैर तुलनात्मक आधार पर समय–समय पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए। बच्चों के प्रदर्शन में सुधार का आकलन किया जाना चाहिए जिससे बच्चों के प्रदर्शन में उर्ध्व वृद्धि (Verticle Growth) हो। प्रगति समीक्षा आवश्यक हैं।

प्राथमिक स्तर – इस स्तर पर मूल्यांकन विवरणात्मक हो जिसमें बच्चों के विकास और व्यवहार का वर्णन हो। शिक्षक मुक्त अभिव्यक्ति और सृजनात्मकता पर पूरे सत्र में निरंतर बल दे और बच्चों का आकलन उसके स्वयं के विकास में करे। यहां बच्चें को अधिक उत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। कुछ बिंदुओं के मापन स्तर पर विद्यार्थियों के कार्य का आकलन किया जा सकता है। यह बिंदु हो सकते हैं –

- ध्यान से देखते हुए सीखना (अवलोकन)
- सहजता और मुक्त अभिव्यक्ति
- अलग–अलग गतिविधियों में भाग लेने की रूचि
- प्रत्येक बच्चे का समूह कार्य में भाग लेना

उच्च प्राथमिक स्तर पर बच्चों द्वारा किए गए कार्य का समय–समय पर आकलन किया जाना चाहिए जो उनके प्रगति पत्र में निम्नलिखित चार या पाँच बिंदुओं वाले मापक पर दिखाया जा सकता है–

- विद्यार्थियों की भागीदारी।
- सामाजिक मेलजोल।
- कला के बुनियादी तत्वों के प्रति समझ।
- प्रयुक्त माध्यमों को समझने में दक्षता।

कला में मूल्यांकन के विभिन्न उपागम इस प्रकार है जिनका शिक्षक अपनी सुविधानुसार उपयोग कर सकते हैं–

अवलोकन, प्रदत्त कार्य(Assignments) परियोजनाएँ, पोर्टफोलियो, जाँच सूची (Check list) , रेटिंग स्केल, संचयी रिकार्ड(Anecdotal Records), प्रदर्शन, साक्षात्कार आदि।

परिशिष्ट

यहाँ एक उदाहरण दिया जा रहा है जिसमें एक पाठ को पंडवानी शैली में ढाल कर इसका प्रस्तुतीकरण किया गया है। बच्चे प्रस्तुतीकरण में भाग लेते हैं और आसानी से पाठ को समझ जाते हैं।

कक्षा छठवीं
विषय – सहायक वाचन
पाठ – पंडित सुन्दरलाल शर्मा
शैली – पंडवानी (सहायक वाचन)

धुन – महानदी के तीर एक नगरी राजिम हे
एक नगरी हो ललना
सुन्दर लाल लिये हे अवतारे हो रामा

अइसे तइसे रागी वो बालक ह 6 बरस के होगे भईया

अपन गाँव के लइका मन ल स्कूल जावत देख के भइया त ओकरो मन करथे कि महूं जातेंव पढ़तेंव लिखतेंव। अपन दाई ल कथे ....

धुन – भेज देना स्कूल दाई भेज देना ओ।
महूं पढ़े बर जाहूं किथों ....

वो बेरा म गाँव–गाँव में स्कूल–कॉलेज न राहय फेर खुदे घर में पढ़ई करके संस्कृत, बंगला, मराठी, अंग्रेजी, उर्दू अउ उड़िया भाषा ल सीख लीस भाई।

किशोरावस्था में वोहा कविता लेख अउ नाटक लिखना शुरू कर दे रीहिस।

वोहा राजिम में कवि समाज के गठन करिस अउ ये अंचल में साहित्यिक चेतना ल जगाईस।

धुन – भोला ल पूछे पारबती हो, भोला ल पूछे पारबती।
हरि दर्शन कब होय जी, भोला ल पूछे पारबती।।
बचपन ले हिंसा ओला नइ भाव हो ....
घर मे दाई ददा ल ओ चेतावय हो ....
जुग जुग के कु परथा ह खतम होगे रागी गा ....
हरि दर्शन कब होही भोला ल पूछे पारबती।।

पं. सुन्दरलाल शर्मा ह अखिल भारतीय कांग्रेस के सदस्य बनगे अउ अपन साथी मन सन मिलके विदेशी वस्तु के बहिष्कार अउ स्वदेशी वस्तु के प्रचार–प्रसार के आन्दोलन शुरू कर दिस। ओकर कहना रिहिसे रागी, जब तक भारत के मनखे मन स्वदेशी वस्तु ल उपयोग नई करही तब तक गाँव मन में गरीबी खतम नइ होवय।
इही पाय के शर्मा जी हा अपन जमीन जायदाद ल बेच के राजीम, धमतरी अउ रायपुर में स्वदेशी वस्तु के दुकान खोल दीन।

धुन – सावन बिना बिजली नई चमके रे
भादो बिना बरसा नई बरसे न ....
अज्ञानता ल मिटाना जरूरी हे भइया ....
अंध विश्वास कुरीति ल हटाना हे भईया रे ....
एखरे सेती राजिम म स्कूल खोलय भइया ....
रायपुर में बाल समाज, पुस्तकाय खोले भइया ....

पं. सुन्दरलाल शर्मा अइसे पहिली विचारक रिहिस हे रागी जेन ह दलित समाज ल बराबर के दर्जा देय बर हमेशा संघर्ष करीन।

छत्तीसगढ़ छुआछूत, ऊँच–नीच के भावना ल दूर करे के प्रयास करिस अउ दलित उत्थान अउ गौ–वध के विरोध करे भइया।

दलित उत्थान अउ संगठन बर रागी गाँव–गाँव घुमे रहे।

जनेऊ पहिराय बेर कथे – मांस के सेवन नई करना मदिरा के सेवन नई करना हे। चाही भइया ....

धुन – मनखे के का चिन्हा हे जात
सब्बो उतरेव एके घाट
तै तो छुआछूत म जिनगी ल
बिता डरे रे मूरखर मानुष गंवार
जात पंथी मे जरूर
तोता मैना अउ मंजूर
वो मन एक रूख मो जिन्गी ल बिता डरीन रे
जात मनखे मा जरूर
एक नारि अउ एक पुरूष
वेमन दोनों मिल के वंश ल बढ़ा डारिन रे

1920 (कंडेल नहर सत्याग्रह) – शर्मा जी के प्रयास ले 20 दिसम्वर 1920 के बात ये रागी, छत्तीसगढ़ मा महात्मा गाँधी ह पहिली बार अइस हे भइया।
ओखर ले पहली एक किसान ओदोन होइस रागी जेन मा किसान मन से नहर टैक्स वसूले वोकर विरोध करीस, अउ शर्मा जी सहित अन्य किसान के प्रयास से ये आंदोलन सफल हो गे भइया।

1933 – गाँधी जी का दूसरा बार छत्तीसगढ़ आगमन 1933 के बात ये भइया, महात्मा गाँधी ह छत्तीसगढ़ आइस, गाँधी जी ह हरिजन उद्धार के काम ल देखीस, त शर्मा जी बर खुश होगे अउ वोला अपन गुरू अउ बड़े भाई मान लीस रागी।

धुन – गाँधी जी प्रशंसा करन लागे भाई
अपन गुरू काहन लागे भाई ....

धमतरी मा रागी – हिन्दू मुस्लिम के दंगा होगे, शर्मा जी हा एकता के पत्र लेवइया, वोहा दोनों पक्ष ल शांत कराय के प्रयत्न करीस रागी।

जंगल सत्याग्रह – 1930 मा भाई .... जंगल सत्याग्रह के अगुवाई करीस अउ वोला गिरफतार करके जेल मा डाल दीस भाई।

आजादी के लड़ई के खतिर, वोला कई घाव जेल जाना पड़े रागी।
वो हर सत्यवादी रहे, अउ सत्य के लिए मत डरो कहे। भइया ....

महान साहित्यकार – पंडित सुन्दरलाल शर्मा जी हा, एक महान साहित्यकार रहे भाई। वोहा हिन्दी अउ छत्तीसगढ़ी में ग्रंथ के रचना करे हे भइया।

छत्तीसगढ़ दान लीला वोकर प्रसिद्ध ग्रंथ ये भाई। छत्तीसगढ़ी दान लीला अतेक लोकप्रिय होगे, कि वाला आज भी गाँव–गाँव गाये जाथे।

शर्मा जी हा भइया, एक साहित्यकार तो आऐचे फेर किसानी ल घलो करे रागी। छत्तसीसगढ़ मावोला अच्छा किसान के पुरस्कार मिले हे रोगी।

निधन – 28 दिसम्बर 1940 के बात हे रागी। ये छत्तीसगढ़ के गाँधी, महान सपूत, समाज सुधारक, दलित मन के मसीहा, पंडित सुन्दरलाल शर्मा के देहांत होगे भइया .... ये रागी, एक ठन बात ये भइया, ये दुनिया ल, एक दिन सब ल छोड़े के जाय ल पड़थे भइया। ये दुनिया मे आय इन त अच्छा काम करके जाना चाही रागी।

धुन – क्या तू आया, मूढ़ जगत में

जग हंसे तू रोय 2
ऐसी करनी कर चल बंदे (भइया)
तू हंसे जग रोय ....

प्रदत्त कार्य (सत्रीय कार्य)/मूल्यांकन—यहाँ सुझावात्मक कार्य दिए जा रहे हैं। आप अपने परिवेश व आवश्यकतानुसार इसमें संशोधन, विस्तार, बदलाव कर सकते हैं।

इकाई 1

1. विभिन्न कला से संबंधित संस्थाओं का पता लगाएं तथा पता करें कि उन कलाओं के विकास के लिए क्या—क्या करते हैं, इस पर एक रिपोर्ट भी तैयार करें।

2. स्थानीय लोकनाट्य क्या है? उसके इतिहास का पता लगाएं व साथियों से चर्चा करें।

3. अपनी पाठ्यपुस्तक (कक्षा 1 ये 5 तक) में से पाठों का चयन कर। अध्ययन केन्द्र पर विभिन्न विधाओं में प्रदर्शन करें। नाटकों को करवाने के दौरान आपको जो अनुभव हो उन पर प्रतिवेदन बनाएँ।

4. अपने आस—पास के विभिन्न कलाकारों व शिल्पकारों की जानकारी एकत्रित करें व विभिन्न अवसरों पर उन्हें अध्ययन केन्द्र में आमन्त्रित करें।

ईकाई 2

1. कला समेकित शिक्षा क्या हैं? इसका महत्व अपने शब्दों में समझाइएं।

2. आप अपनी शाला में कला में विभिन्न विषयों में कला शिक्षा को किस प्रकार जोड़ना पसंद करेंगे। प्रतिवेदन लिखिए?

3. कुछ ऐसे कला समेकित गतिविधियों का उदाहरण दीजिए जिसे अपने अध्यापन के दौरान करना चाहेंगे।

4. कुछ ऐसे कला समेकित गतिविधियों का उदाहारण दीजिए जिसके माध्यम से आप अपनी कक्षा में समूह भावना को प्रोत्साहन कर सकते है।

5. पाठ्यपुस्तक पर आधारित विषयों में दृश्य कलाओं द्वारा सीखने की योजना का निर्माण करें तथा उसका कक्षा में क्रियान्वयन करें।

ईकाई 3

1. अपने विद्यालयों में विद्यार्थियों से चित्रकारी, पेंटिंग, छापे आदि के कार्य कराएं एवं पोटफोलियों तैयार करें।

2. पुतली कैसे बनायी जाए, इसके लिए एक विशेषज्ञ को बुलाकर अपने अध्ययन केन्द्र पर कार्यशाला का आयोजन करवाएं और पाठ्यपुस्तक की कहानियों से संबंधित पुतलियां तैयार करें।

3. पेपर मैशी बनाने और उसे विभिन्न आकृतियों का निर्माण करना सीखें तथा अपने विद्यालय के विद्यार्थियों को सिखाएं।

4. अपने आस–पास के कुछ मूर्ति कलाकारों से मिलकर पता करे कि मूर्ति कैसे तैयार करते है। (टेरकोटा का कार्य भी सीखें।)

5. अपने आसपास के लोककलाकारों का पता लगाएं व उनकी केस स्टडी तैयार करें।

ईकाई 4

1. लोकविधा क्या है अपने आस–पास की लोक विधाओं का अवलोकन कर लिपिबद्ध करें।

2. बालगीतों का अपनी कक्षाओं में उपयोग कर उसकी प्रभाविता पर एक रिपोर्ट तैयार करें व बालगीतों का संकलन करें।

3. स्थानीय लोकनृत्यों की जानकारी संकलित कर फाइल तैयार करें।

4. अपने आस–पास के पर्यटन स्थलों का भ्रमण कर संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार करें।

5. लोक कलाओं के इतिहास का संग्रह करें।

कुछ सुझावात्मक गतिविधियाँ –

1. बच्चों से उनकी खाने, पहनने (पसंद–नापसंद) पर बातचीत करना।

2. विभिन्न प्रकार की वस्तुओं में आकार एवं रंगों की पहचान करना जैसे रंग – हरा, लाल–पीला, हरा–नीला इनसे संबंधित खेल खिलाना।

3. अभिनय करवाना जिसमें उन्हें अलग–अलग निर्देश दें, घर के सदस्य माता, पिता, दादा, दादी अपनी टीचर, मित्र या अन्य किसी की नकल करना।

4. सोचे और बोले

1. अगर पेड़े पर टॉफी लगी हो तो
2. अगर पेड़–पौधे चलने लगें
3. यदि हमारे पंख होते
4. हम सभी राजा होते
5. आप मुख्यमंत्री/प्रधानमंत्री होते

5. अंतर ढूंढो (दो एक जैसी तस्वारों जिनमें कुछ अन्तर हों को दिखाकर अंतर ढूंढने को कहना)

6. एक शब्द में शुरू करके प्रत्येक बच्चे से एक–एक अलग वाक्य बुलवाना।

7. आकृति पूरी करना– एक आकृति देकर दूसरी आकृति बनवाना।

8. अधूरी आकृति पूर्ण करना (जानवरों के चित्रों आदि की आकृति)

9. अभिनय करना (बोले गये – वाक्यों पर अपने चेहरे पर भाव लाना। (रोना, हंसना, क्रोध करना, मुस्कुराना, मचलना।

10. पशु पक्षी के चालों की नकल करना।

11. बिंदुओं से आकृति पूर्ण करना।

12. पहेलियॉं –पूछना (बच्चों से फल, सब्जी, परिवेश की वस्तुओं से संबधित पहेलियाँ बूझने व पूछने हेतु कहना।)

13. पसंद, नापसंद पूछना।

14. फलों/वस्तुओं के उपयोग स्वाद, रंग आकृति, मौसम आदि पर चर्चा।

15. प्रचलित गानों की धुन–गुनगुनाएं और गाना पहचानने को कहें।

16. कविता, गीत आदि पर ताल से थिरकने को कहें।

17. वाद्य यंत्रो की आवाज पहचानने को कहना (हारमोनियम, तबला, ढोलक, घुंघरू झांझ, घंटी, बांसुरी)

18. स्थानीय गीत, नृत्य, पारंपरिक त्यौहारों के बारे में बच्चों से जानकारी लेना व बताना, गीतों नृत्यों का प्रदर्शन करवाना।

19. परिवेश के चित्रों का अवलोकन कराना व घरों में त्यौहारों पर कौन–कौन से चित्र बनाये जाते हैं सीखकर उनका अभ्यास करना।

कुछ उपयोगी पुस्तकों की सूची

1. शिक्षा का वाहन – कला, देवी प्रसाद, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया
2. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – 2005, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।
3. हस्तशिल्पों की धरोहर, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली
4. कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नयी दिल्ली।
5. कहानी कहने की कला, पंकज चतुर्वेदी, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
6. कठपुतली मार्गदर्शिका, मीना नाईक, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
7. कक्षा VI के लिए कला शिक्षा पर शिक्षक संदर्शिका, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।
8. कला शिक्षा की शिक्षक संदर्शिका (कक्षा V), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।

संदर्भ –

1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – 2005, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली। (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2016 (ड्राफ्ट)
2. छत्तीसगढ़ समग्र, संस्करण – प्रथम 2013, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय परिसर, रायपुर छत्तीसगढ़
3. डिप्लोमा इन एजुकेशन (डी.एड.) प्रथम वर्ष 2013 हेतु, विषय कला व कला शिक्षा, राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, छत्तीसगढ़, रायपुर।
4. हस्तशिल्पों की धरोहर, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली।
5. कला, संगीत, नृत्य ओर रंगमंच, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली।
6. कला से सीखना,जेन साही एवं रोशन साही, एकलव्य का प्रकाशन।
7. प्राथमिक शाला में कारीगरी की शिक्षा, गिजू भाई– साक्षरता केन्द्र, दिल्ली।

8. समेकित पाठ्यपुस्तक (गणित–पर्यावरण) कक्षा 5 भाग दो, 2014–15 राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर छत्तीसगढ़

9. शिक्षा का वाहन – कला, देवी प्रसाद –नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया, दिल्ली।

10. कबाड़ से जुगाड़ ''विष्णु चिंचोलकर

11. कला समेकित शिक्षा भाग–1 प्रथम सत्र, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् , पटना, बिहार।

12. कला शिक्षण B.S.T.C. (D.El.Ed.) पठन सामग्री – प्रथम वर्ष, राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान उदयपुर, राजस्थान।